वृद्धावस्था

लोकोपयोगी विज्ञान

वृद्धावस्था

कल्लूरी सुब्बा राव

अनुवाद
विनीता सिंघल

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

विषय सूची

प्राक्कथन

जब नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया ने पहली बार मुझे वृद्धावस्था पर ऐसे पाठकों के लिए पुस्तक लिखने को कहा जिनकी विज्ञान की समझ कक्षा आठ के विद्यार्थियों जितनी हो तो मेरी पहली प्रतिक्रिया बहुत अच्छी नहीं थी। वृद्धावस्था जैसे विषय पर क्यों चर्चा करनी चाहिए, मुझे आश्चर्य हुआ। लेकिन तभी, मुझे अपने एक मित्र की एक कूटोक्ति याद हो आई, "हम उसी पल से बूढ़े होने लगते हैं जब हम पैदा होते हैं।" स्कूलों में जिस तरह जन्म, वृद्धि और विकास जैसी क्रियाओं के बारे में पढ़ाया जाता है, संभवतया उसी तरह युवा विद्यार्थियों को वृद्धावस्था और जराजन्यता विज्ञान के बारे में भी जानकारी देना आवश्यक है। वृद्धावस्था और जराजन्यता ऐसी अवस्थाएं हैं जिन्हें कोई पसंद नहीं करता। युवाओं का भविष्य भी तो अन्ततः बुढ़ापा ही है। इस प्रकार, मैंने सरल सुबोध भाषा में, वृद्धावस्था की प्रक्रिया को समझाने की जिम्मेदारी स्वीकार कर ली। हालांकि मैं स्वीकार करता हूं कि यह सरल कार्य नहीं था। वृद्धावस्था और जराजन्यता इतनी जटिल प्रक्रियाएं हैं कि उन्हें सरल भाषा में समझाने का अर्थ है जीवन का निर्माण करने वाली घटनाओं के सभी रहस्यों को उजागर करना और उन्हें इस तरह प्रस्तुत करना कि वे जीवन के सीधे-सादे और सोचे-समझे सत्य मालूम हों।

मैंने अपनी ओर से इस कठिनाई को हल करने का पूरा प्रयास किया है और इसे रोचक भी बनाया है—न केवल उनके लिए जिन्होंने आठवीं कक्षा तक विज्ञान पढ़ा है, बल्कि उनके लिए भी जिन्हें विज्ञान का ज्ञान तो बिलकुल नहीं है, लेकिन और अधिक जानने की लालसा है। मुझे आशा है कि यह पुस्तक एक तेजस्वी युवा व्यक्ति के कम समर्थशाली बूढ़े में परिवर्तित हो जाने के प्रति पाठकों में पर्याप्त उत्सुकता जगाएगी। बुढ़ापा, आखिरकार, एक साधारण टूट-टूट की संयोगिक घटना नहीं है। इसके विपरीत, वृद्धावस्था और मृत्यु दोनों के संकेत, हमारे आनुवंशिक ब्लूप्रिंट में बहुत गहराई में स्थित होते हैं।

मैं दो व्यक्तियों, सुश्री एन.एस. राजी और डा. श्रीपद गूंवर के प्रति आभार प्रकट करना चाहूंगा जिन्होंने यह पांडुलिपि तैयार करने में कई तरह से मेरी सहायता की है। हैदराबाद के श्री बी.वी. सत्यमूर्ति ने अपनी व्यस्तता के बावजूद उदारता से कई कार्टून तैयार किए, किंतु दुर्भाग्यवश प्रकाशक ने उन्हें पुनर्चित्रित कराने का निर्णय लिया। फिर भी, मैं हृदय से उनका धन्यवाद करता हूं।

1

समय का प्रयाण

मैं किसी को देखना नहीं चाहता,
और मैं नहीं चाहता कि कोई मुझे देखे।
तुम नहीं जानते कि
मुझ जैसा बूढ़ा होना क्या है।
क्या तुम्हें लगता है कि मैं चाहता हूं,
महान जा.ब.शॉ को याद किया जाए—
एक जर्जर कांपते बूढ़े की तरह ?

—जार्ज बर्नाड शॉ

वृद्धावस्था और मृत्यु सदैव ही मनुष्य के लिए एक प्रश्न बने रहे हैं, जिसका सही उत्तर कभी नहीं मिला कि ऐसा क्यों होता है, मनुष्य क्यों सदैव जवान नहीं रह सकता और वह अमर क्यों नहीं है। हमेशा से ही विभिन्न धर्म और दर्शनशास्त्र, शारीरिक क्षमताओं में आने वाली गिरावट की अनिवार्यता और मृत्यु के बोध से प्रभावित रहे हैं।

वृद्धावस्था जीवन का एक सामान्य हिस्सा है। यह शरीर के विभिन्न अंगों की संरक्षित क्षमताओं में धीरे-धीरे होने वाली कमी-से संबंधित है। दूसरे शब्दों में, हम वृद्धावस्था को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित.कर सकते हैं जो सभी शारीरिक क्षमताओं में उत्तरोत्तर कमी से पहचानी जाती है। दर्शन के अनुसार वृद्धावस्था जीव के जन्म के साथ ही आरम्भ हो जाती है। यद्यपि, एक दूसरे अर्थ में और ऊपर दी गयी व्याख्या के अनुरूप, यह जीव के जीवनकाल के दौरान एक विशेष समय पर आरंभ होती है। मनुष्य में वृद्धावस्था शारीरिक, मानसिक और सामाजिक कारकों की जटिल परस्पर क्रिया का परिणाम होती है। जीवनकाल को

समाप्ति की ओर ले जाने वाले सभी कारकों का नियंत्रण और उनकी समझ, जराविज्ञान कहलाता है। प्रत्येक प्रजाति का जीवनकाल, उसके प्रजनन काल और विकास की अवधि से पूरी तरह जुड़ा होता है। इसलिए, वृद्धावस्था का अध्ययन करने के लिए हमें जीवन के तीन पक्षों के बारे में जानना आवश्यक है; आयुकाल (दीर्घ आयु), वृद्धावस्था और मृत्यु। आयुकाल किसी जीव का जीवन काल है, वृद्धावस्था एक क्रमिक परिवर्तन है जो शरीर को दुर्बलता, रोग और मृत्यु की ओर ले जाता है, और अंत में आती है जर्जरता, जिसमें वृद्ध होने की प्रक्रिया की ये अभिव्यक्तियां निहित होती हैं। बूढ़ा होने की प्रक्रिया को विभिन्न कारक, जैसे बुढ़ापे के लक्षण, शारीरिक गठन, भौतिक कारक, आहार, बीमारियां, पर्यावरणीय और आनुवंशिक कारक प्रभावित करते हैं।

यह हमारे दैनिक जीवन का सामान्य अनुभव है कि जब हम किसी व्यक्ति से मिलते हैं, हम उस व्यक्ति की आयु का अनुमान लगा लेते हैं। यह कैसे संभव होता है ? ऐसा इसलिए संभव होता है क्योंकि हमारे मस्तिष्क में यह सूचना निहित होती है कि जीवन के किसी विशेष आयुकाल में कोई स्त्री या पुरुष कैसा दिखाई देता है। मस्तिष्क से संचित इस सूचना के आधार पर हम प्रायः यह अनुमान लगा

चित्र 1. आयु के दो चेहरे।

सकते हैं कि एक दस वर्ष का बच्चा या साठ वर्ष का बूढ़ा कैसा दिखाई देता है। आयु के साथ शारीरिक माप और उसकी बनावट संबंधी लक्षणों में आयु के साथ होने वाले क्रमिक परिवर्तनों को हम भली प्रकार रिकार्ड या अनुभव कर चुके होते हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि ऊपर दी गयी परिभाषा में वर्णित शारीरिक क्रियाओं के अतिरिक्त, आयु बढ़ने के साथ शरीर की बनावट से संबंधित कुछ लक्षण भी प्रकट होते हैं। इस मत को स्पष्ट करने के लिए चित्र 1 में दो चेहरे प्रदर्शित किए गए हैं।

बाईं ओर एक युवा और दाईं ओर एक बूढ़ा व्यक्ति है। उनकी सामान्य बाह्य आकृति और त्वचा की झुर्रियों में अंतर स्पष्ट है। इन बाह्य आकृतियों को हम दैनिक जीवन में एक प्राकृतिक घटना के रूप में ग्रहण कर लेते हैं। लेकिन यदि किसी से पूछा जाए कि आयु के साथ त्वचा के इस परिवर्तन के लिए कौन सी प्रक्रिया उत्तरदायी है तो यह विषय, वृद्धावस्था का विज्ञान बन जाता है।

किसी के भी जीवन में वृद्धावस्था के लक्षण एक विशेष समय पर उभरते हैं। हर संकेत अथवा लक्षण किसी न किसी महत्वपूर्ण अंग के ठीक से काम न करने का संकेत देता है। इसका अंतिम परिणाम होता है मृत्यु। यही प्रकृति का नियम है।

लगता है प्रकृति किसी संहारक की तरह काम करती है, लेकिन यह सुनिश्चित करने के बाद कि जीव ने अपना विस्तार कर लिया है। अर्थात् प्रजनन की क्रिया पूरी हो चुकी है और वयस्क की नवीन प्रतिकृतियां जन्म ले चुकी हैं।

यदि जीवित प्राणी एक के बाद एक बूढ़े न होते और न मरते तो पृथ्वी जीवित लोगों से भरी होती और हर आयु के व्यक्तियों का जीवन संकट में होता।

यह महत्वपूर्ण है कि हम पुनः उसी प्रश्न पर वापस आ जाएं कि किसी के जीवन में वृद्धावस्था की वास्तविक प्रक्रिया कब आरंभ होती है। इससे पहले कि हम इस पक्ष पर विचार करें, यह अच्छा होगा कि स्वयं जीवन के उद्भव, जीवों के आविर्भाव और उनके जीवनकाल से संबंधित कुछ वास्तविकताओं के बारे में मौजूदा जानकारी का पुनरावलोकन कर लिया जाये।

विशेषज्ञों का विश्वास है कि हमारे ग्रह पृथ्वी पर 'जीवन' का आरंभ लगभग तीन से चार करोड़ वर्ष पहले हुआ। यह 'जीवन' कुछ विशेष न्यूक्लिक अम्लों और प्रोटीनों जैसे रासायनिक पदार्थो के बीच परस्पर क्रिया से आरंभ हुआ होगा। न्यूक्लिक अम्ल और प्रोटीन स्वयं वायुमंडल में उपस्थित नाइट्रोजन (N_2), अमोनिया (NH_3), कार्बन मोनोआक्साइड (CO), कार्बन डाइआक्साइड (CO_2), मीथेन (CH_4) और पानी (H_2O) से उत्पन्न हुए होंगे और अपने लिए आवश्यक ऊर्जा उष्मा,

विद्युत आवेशों और पराबैंगनी प्रकाश से लेते रहे होंगे। अमीनो अम्ल, फार्मेल्डिहाइड और हाइड्रोजन सायनाइड को ऐसे स्वतः प्रवर्तित विसर्जनों का उत्पाद समझा गया। वास्तव में, वैज्ञानिकों ने पूर्वजैविक (जीवन आरंभ होने से पहले की) स्थितियों को स्वयं प्रेरित करके, इन परिवर्तनों को प्रयोगशाला में दिखाया है। व्यापक प्रयोगों ने यह भी दिखाया है कि वास्तव में प्यूरीन और पिरीमिडीन (न्यूक्लिक अम्लों की रचना करने वाली नाइट्रोजनयुक्त क्षारें जो आज हमें ज्ञात हैं) को अमोनियम सायनाइड से आरंभ कर बनाया जा सकता है। उसी तरह एक प्रकार के न्यूक्लिक अम्ल में मौजूद राइबोज (एक पांच कार्बन वाली शर्करा) को फार्मेल्डिहाइड से बनाया जा सकता है। न्यूक्लिक अम्लों और प्रोटीनों (प्यूरीन, पिरीमिडीन, शर्करा और अमीनो अम्ल) की मूलभूत निर्माण इकाइयों के संश्लेषण को बाहरी अंतरिक्ष में काफी मात्रा में मौजूद सायनायड, फार्मेल्डिहाइड और मीथेन जैसे सरल अणुओं के जलीय विलयन में सुगमता से दिखाया जा सकता है।

न्यूक्लिक अम्लों और प्रोटीनों के संभावित निर्माण के अगले चरण, अर्थात न्यूक्लिओटाइडों (प्यूरीन या पिरीमिडीन+शर्करा+फास्फेट) और पेप्टाइडों (एक दूसरे से जुड़े अमीनो अम्ल) के निर्माण को भी प्रयोगशाला में दिखाया गया है। यह माना जाता है कि जस्ता और सीसा जैसे कुछ खनिजों ने न्यूक्लिओटाइडों से न्यूक्लिक अम्लों के निर्माण में पहले कभी उत्प्रेरक का काम किया होगा।

जीवन का आरंभ होने से भी पहले, पॉलीन्यूक्लिओटाइडों का निर्माण, न्यूक्लिओटाइडों और पेप्टाइडों की पारस्परिक क्रिया से प्रभावित हुआ होगा। यद्यपि अभी भी इस बात पर बहस जारी है कि पहले प्रोटीन का निर्माण हुआ या न्यूक्लिक अम्ल का, लेकिन ऐसा लगता है कि कुछ पेप्टाइडों ने पॉलीन्यूक्लिओटाइडों से न्यूक्लिओटाइडों के निर्माण में मदद की होगी। इस प्रकार यह लगता है कि न्यूक्लिक अम्ल और प्रोटीन जैसे जीवन के प्रमुख अणु पूर्वजैविक अवस्थाओं में बने होंगे।

एक बार न्यूक्लिक अम्ल और प्रोटीनों के निर्माण के बाद, इन अणुओं ने और अधिक ऐसे अणु बनाने के लिए एक दूसरे की सहायता की होगी। करोड़ों वर्षों के अंतराल में विकास के किसी बिंदु पर न्यूक्लिक अम्लों ने व्यवस्थित होकर जीनोम का निर्माण किया होगा। जीनोम एक ऐसा आनुवंशिक पदार्थ है जिसमें मूल जीव की अनुकृतियां बनाने की क्षमता होती है और इस प्रकार किसी प्रजाति के संवर्धन का ब्लूप्रिंट सुरक्षित होता है।

यह अब भी चिंतन का विषय है कि किस प्रकार न्यूक्लिक अम्ल और प्रोटीन जैसे निर्जीव अणुओं में जान आई होगी और किस प्रकार जीवन आरंभ हुआ होगा।
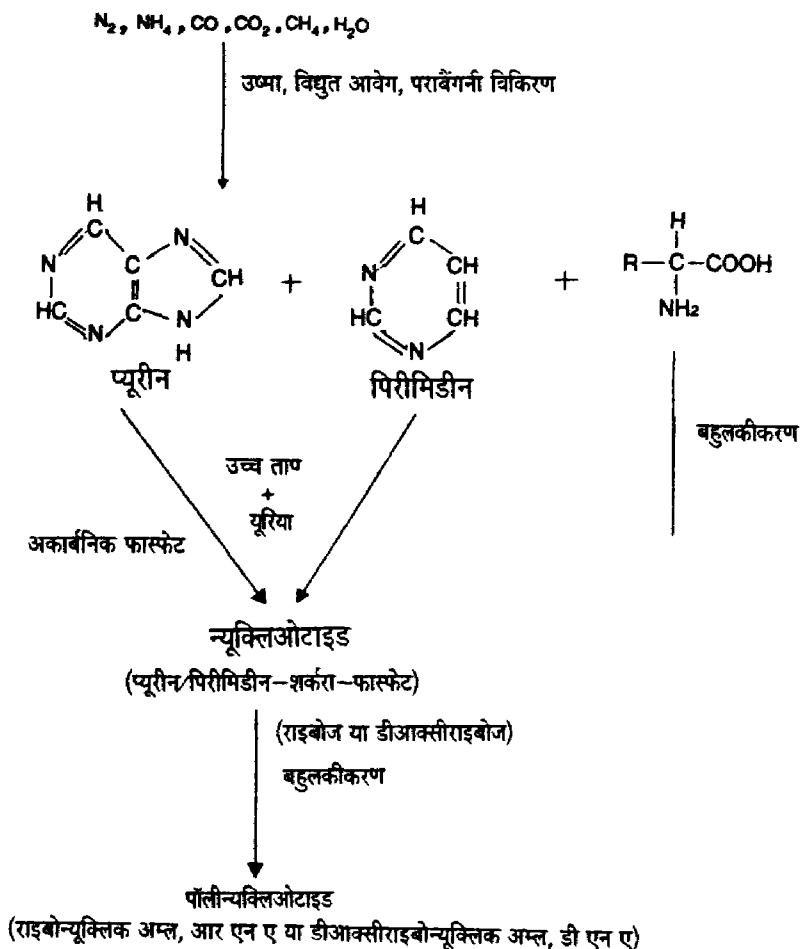
चित्र 2 पारस्परिक क्रियाओं का प्रदर्शन

हालांकि सभी 'जीवित' पदार्थों के सूक्ष्म परीक्षण से जीवित पदार्थों के कुछ विशेष लक्षण दिखाई पड़ते हैं। कोशिका जीवों की क्रियात्मक इकाई होती है जिसका रासायनिक संघटन एक समान नहीं होता है। कोशिका में न केवल विभिन्न प्रकार के रासायनिक पदार्थ पाए जाते हैं, बल्कि वे अत्यंत व्यवस्थित ढंग से विद्यमान होते हैं। अनेक जड़ रासायनिक पदार्थों की यह व्यवस्था ही है जो जीवन प्रदान करती है। किसी भी जीव में मौजूद प्रत्येक अंग और प्रत्येक रसायन का एक विशेष उद्देश्य और कार्य होता है। जीवों का रासायनिक संघटन उस वातावरण से बिलकुल अलग होता है जिसमें वे रहते हैं। जीवों का सबसे विलक्षण गुण है उनकी नितांत परिशुद्ध ढंग से प्रजनित होने की क्षमता। केवल एक बार नहीं, बल्कि अनगिनत बार।

2

आगे बढ़ने के लिए गुणा

यह वास्तव में विलक्षण है कि प्रत्येक जीव अपने विशिष्ट लक्षणों को पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित करते हैं। हर पीढ़ी में वृद्धि, विकास और प्रजनन के पश्चात बुढ़ापा आता है और अंत में मृत्यु होती है।

एवेरी नामक वैज्ञानिक और उसके दल ने सबसे पहले 1944 में दर्शाया कि डीआक्सीराइबोन्यूक्लिक अम्ल (डी एन ए) नामक आनुवंशिक पदार्थ ही जनक कोशिका से संतति कोशिका में सूचनाओं को ले जाने के लिए जिम्मेदार होता है।
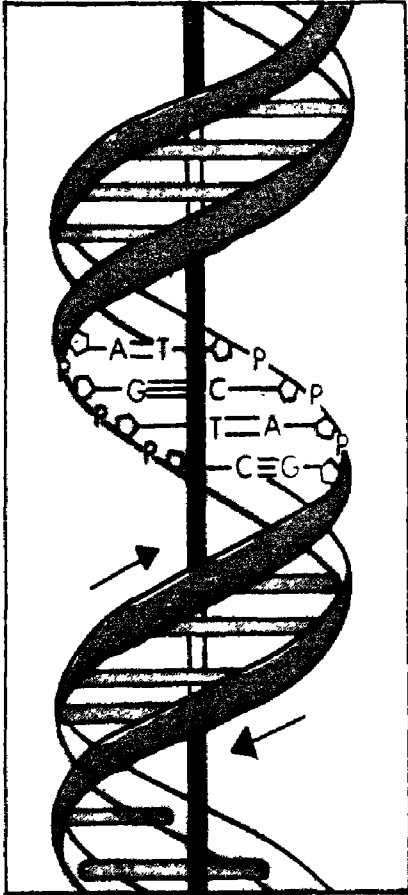
चित्र 3. डी एन ए की संरचना

1953 में वाटसन और क्रिक द्वारा डी एन ए की संरचना की स्पष्ट जानकारी प्राप्त करना आनुवंशिक सूचनाओं के स्थानांतरण की विधि को समझने में एक और मील का पत्थर सिद्ध हुआ। उन्होंने बताया कि डी एन ए, शर्करा अणुओं का बना होता है जो नाइट्रोजनीकृत क्षार और फास्फेट ग्रुप से जुड़े होते हैं। ये नाइट्रोजनीकृत क्षार चार प्रकार की होती हैं–एडेनीन, ग्वानीन, साइटोसीन और थायमीन। डीएनए अणु की प्रत्येक इकाई, तीन मूल संघटकों–क्षार–शर्करा–फास्फेट–से बनी न्यूक्लिओटाइड होती है। ये इकाइयां आपस में जुड़ कर लंबी न्यूक्लिओटाइड शृंखला (पॉलीन्यूक्लिओटाइड) बनाती हैं।

आमतौर से डी एन ए धागे के आकार के दो तंतुओं की सर्पिल रचना होती

है (चित्र 3)। दोनों तंतु बीच में क्षारों के कमजोर बंधों से जुड़े होते हैं। एडेनीन सदैव थायमीन के साथ जुड़ता है और ग्वानीन हमेशा साइटोसीन से जुड़ता है। इस प्रकार एक तंतु के क्षार अनुक्रम सदैव दूसरे तंतु के क्षार अनुक्रमों के पूरक होते हैं। ये क्षार अनुक्रम ही हैं जो जीव में वृद्धि और विकास के लिए वास्तविक संदेश ले जाते हैं। प्रत्येक जीव अपने आप में बेजोड़ होता है क्योंकि हर जीव के डी एन ए में क्षारों का अनुक्रम विशिष्ट होता है। इसका अर्थ हुआ कि विकास प्रक्रिया के दौरान जन्म लेने वाले प्रत्येक एककोशिकीय जीव में डी एन ए विशिष्ट होता है, इसीलिए कोशिका में बनने वाले प्रोटीन और अन्य अणु भी विशिष्ट प्रकार के होते हैं। अनुमान है कि इ. कोलाई नामक जीवाणु में लगभग 3,000 प्रोटीन होती हैं। एक मानव शरीर में लगभग 100,000 विभिन्न प्रकार की प्रोटीन होती हैं।

पृथ्वी पर पाए जाने वाले जीवों की प्रजातियों की संख्या (दस लाख से भी अधिक) को देखते हुए, सजीव संसार में विभिन्न प्रकार की प्रोटीनों और अन्य अणुओं की विपुलता की कल्पना की जा सकती है। यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि इस अतिशय विविधता में क्षार शृंखलाओं की विविधता और विकास की प्रक्रिया के दौरान यह रसायन किस प्रकार अपने क्षार अनुक्रम को बदलता है, यह उस रहस्यमय विधि में निहित है।

किसी सजीव के अनेक उत्कृष्ट गुणों में से एक है ठीक ढंग से प्रजनित होना। इसका अर्थ है कि संतति कोशिका में आनुवंशिक पदार्थ, डी एन ए की हूबहू प्रतिकृति मौजूद हो, जिसका पुनः यही अर्थ है कि संतति कोशिका के डी एन ए में क्षारों का अनुक्रम, जनक कोशिका के बिलकुल समान हो।

आइए, अब हम देखें कि आदिम एककोशिकीय जीवों ने किस प्रकार अपनी प्रतिकृतियां तैयार कीं। सबसे प्राचीनतम, सूक्ष्मतम और सरलतम जीव है सूक्ष्मदर्शी से देखा जा सकने वाला एककोशिकीय जीवाणु। जीवाणु हर उस जगह पाए जाते हैं जहां जीवन पाया जा सकता है। जीवाणु आमतौर से अलैंगिक विधि से प्रजनित होते हैं जिसे युग्म विभाजन कहते हैं।

इस प्रकिया में, आनुवंशिक पदार्थ (डी एन ए) पहले स्वयं को द्विगुणित करता है। इसके बाद, कोशिका स्वयं को फैलाती है और बीच में नयी कोशिका भित्ति बनने के साथ ही दो में विभाजित हो जाती है। इस प्रकार पूरी कोशिका अंत में दो संतति कोशिकाओं में विभाजित हो जाती है जिनमें से प्रत्येक में आनुवंशिक पदार्थ की एक जैसी प्रतिकृतियां मौजूद होती हैं। आदर्श परिस्थितियों में, एक जीवाणु में, इस विभाजन में लगभग 20 से 30 मिनट का समय लगता है।

युग्म विभाजन द्वारा अलैंगिक प्रजनन का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने से एक
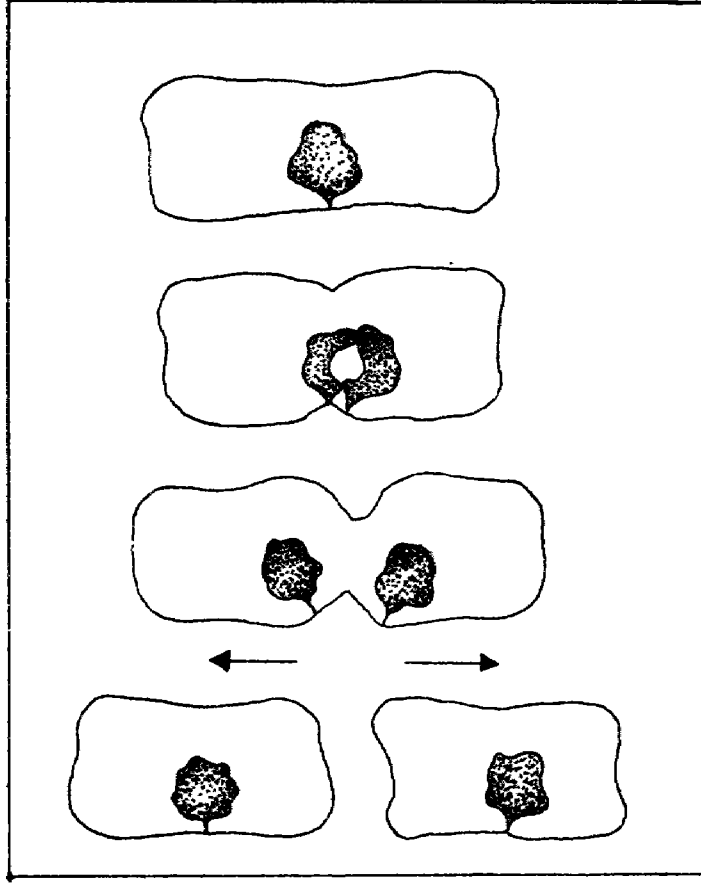
चित्र 4. युग्म विभाजन

रोचक तथ्य सामने आता है कि अपनी प्रजाति को प्रवर्धित करते समय पूरी कोशिका विभाजित होती है और कोशिका का कोई भी भाग या आनुवंशिक पदार्थ इस प्रक्रिया के दौरान व्यर्थ नहीं जाता। दूसरे शब्दों में, इस प्रजाति के वृद्ध होने और नष्ट होने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता और जब तक पोषक आहार मिलता रहता है, यह प्रजनन चलता रहता है।

कुछ जीवाणु जैसे कि इ. कोलाई ऐसे भी हैं जिनमें एक प्रकार का लैंगिक प्रजनन भी होता है जिसे 'जीवाण्विक संयुग्मन' कहते हैं। इस प्रक्रिया के दौरान दाता जीवाणु (जिसे नर माना जा सकता है) डी एन ए के छोटे टुकड़े (जिसे प्लाज्मिड कहते हैं) को ग्राहक जीवाणु (जिसे मादा समझा जा सकता है) में स्थानांतरित करता है। कभी-कभी प्लाज्मिड में एक विशेष जीन होती है जिसे जननक्षम या एफ जीन कहते हैं। ऐसा जीवाणु दाता या नर का काम करता है।

दाता से ग्रहणकर्ता में प्लाज्मिड के स्थानांतरण के दौरान, कभी-कभी यह भी हो सकता है कि दाता के क्रोमोसोम का एक टुकड़ा भी ग्राहक में चला जाए। क्रोमोसोम के टुकड़े के साथ प्लाज्मिड स्थानांतरण की यह प्रक्रिया संयुग्मन कहलाती है। इसके बाद, ग्राही जीवाणु में विभाजन होने लगता है और संतति का जन्म होता है, जिसमें कुछ गुण दाता के भी आ जाते हैं।

इस प्रकार एक बार लैंगिक प्रजनन होने के बाद, जीव चाहे कितना ही आदिम क्यों न हो, संतति में सदैव मिले-जुले आनुवंशिक लक्षण आ जाते हैं, और संतति कोशिकाएं अब जनक की हूबहू नकल नहीं होतीं। इसके साथ ही, अपना आनुवंशिक पदार्थ ग्राही जीवाणु को दे देने के बाद, दाता जीवाणु के पास और कुछ करने को नहीं रह जाता।

जीवाणुओं में सामान्य अलैंगिक प्रजनन के अतिरिक्त एक और परिवर्तन देखने में आता है, और वह है बीजाणुओं का बनना। ऐसा वातावरण की विपरीत परिस्थितियों में कोशिका के आनुवंशिक पदार्थ की रक्षा करने के लिए होता है। बीजाणु निर्माण की प्रक्रिया के दौरान जीवाणु, आनुवंशिक पदार्थ और प्रोटोप्लाज्म (जीवद्रव्य) के चारों ओर एक अभेद्य भित्ति बनाता है (चित्र 5)। शेष कोशिका नष्ट हो जाती है। बीजाणु अनुकूल परिस्थितियां न होने पर निष्क्रिय रहता है। जब अनुकूल परिस्थितियां होती हैं तो बीजाणु सक्रिय होकर विभाजित होना आरंभ कर देता है।

बीजाणु का बनना और संयुग्मन ऐसे उदाहरण हैं जो यह बताते हैं कि आदिम एककोशिकीय जीवों में भी लैंगिक प्रजनन की ओर बढ़ने की नैसर्गिक प्रवृत्ति होती है जिसका पता कुछ विशेष आनुवंशिक पदार्थो से चलता है जो जीवों के प्रवर्धन के लिए आवश्यक होते हैं। इस प्रक्रिया में, प्रकृति कोशिका के किसी भाग या संपूर्ण जनक कोशिका के नष्ट हो जाने की चिंता नहीं करती।

बहुकोशिकीय उच्च श्रेणी के जीवों में, प्रवर्धन सदैव लैंगिक होता है। आनुवंशिक सूचनाओं का स्थानांतरण एक जटिल प्रक्रिया है और संतति कभी भी किसी एक जनक की हूबहू प्रतिकृति नहीं होती। इन सभी उच्च श्रेणी के जीवों में जनक कोशिकाएं या जनक स्वयं, जनन क्रिया पूरी होने के बाद नष्ट हो जाते हैं। चूंकि 'जीव' एककोशिकीय में परिवर्तित हुआ, प्रजनन की विधियां भी अलैंगिक से लैंगिक में परिवर्तित हुईं। प्रजातियों के प्रवर्धन की विधि में यह परिवर्तन, जीवों में एक नया आयाम भी लेकर आया—बुढ़ापा और/मृत्यु।

मनुष्य में आनुवंशिक पदार्थ, डी एन ए के 23 लंबे कुंडलित जोड़ों के रूप में मौजूद होता है जिन्हें क्रोमोसोम कहते हैं (चित्र 6)। क्रोमोसोमों के 22 जोड़े एक से होते हैं और उन्हें सजातीय कहा जा सकता है। 23वां जोड़ा व्यक्ति का लिंग
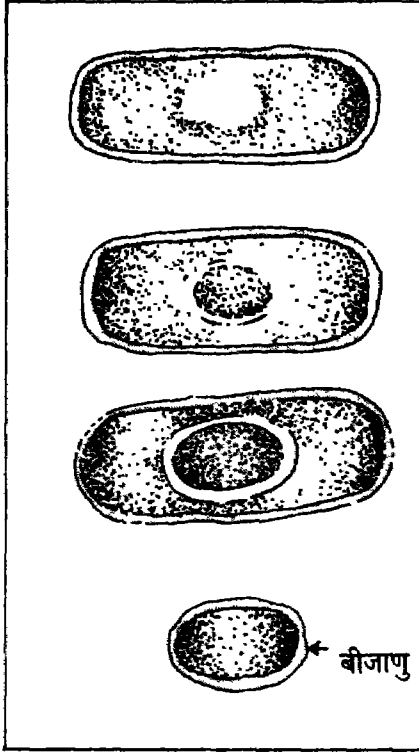
चित्र 5. बीजाणु का बनना

निर्धारित करता है। पुरुषों में यह जोड़ा सजातीय नहीं होता। इसमें एक X-क्रोमोसोम होता है और दूसरा Y-क्रोमोसोम। दूसरी ओर, स्त्रियों में, यह जोड़ा सजातीय होता है। इसमें दो X-क्रोमोसोम होते हैं। जिन कोशिकाओं में क्रोमोसोमों का एक सैट होता है उन्हें अगुणित या हेप्लॉयड कहते हैं, परंतु जिस कोशिका में क्रोमोसोम के 23 जोड़े अर्थात् 46 क्रोमोसोम होते हैं उसे द्विगुणित या डिप्लॉयड कहते हैं। मनुष्यों में शुक्राणु और अंडाणु जैसी लिंग कोशिकाओं को छोड़कर सभी कोशिकाएं डिप्लॉयड होती हैं। हेप्लॉयड लिंग कोशिकाएं या गैमीट, अर्धसूत्री कोशिका विभाजन द्वारा बनती हैं। अर्धसूत्री विभाजन के दो उद्देश्य होते हैं। एक तो यह द्विगुणित कोशिकाओं को अगुणित युग्मक में बदलने के लिए क्रोमोसोम की संख्या को आधा कर देता है। इसके पीछे जीवों में क्रोमोसाम की निश्चित संख्या बनाए रखना प्रकृति का उद्देश्य होता है। जब लिंग कोशिकाएं आपस में मिलती हैं तो इस प्रकार बने युग्मनज (जाइगोट) में क्रोमोसोम की ठीक वही संख्या होती है जो जनक में होती है। दूसरी प्रमुख घटना है, क्रासिंग ओवर। अर्धसूत्री विभाजन में, क्रोमोसोम के कुछ भागों का आदान-प्रदान होता है।

लैंगिक प्रजनन में, युग्मक बनने और उनके मिलने से युग्मनज बनने की प्रक्रिया के समय और इसके बाद वयस्क में बदलने के लिए युग्मनज की वृद्धि और विकास के लिए होने वाले कोशिका विभाजन में, संतति में पुनर्संयोजन और आनुवंशिक लक्षणों के पुनर्चयन के अनगिनत अवसर होते हैं। एक क्रोमोसेम के कुछ भाग का दूसरे क्रोमोसोम में विनिमय, एक अवसर भी है और बदलते हुए वातावरण के अनुरूप बनाने के लिए अज्ञात बलों द्वारा प्रेरित एक आवश्यकता भी है।

आण्विक शैली में इसका क्या अर्थ है ? डी एन ए के कुछ विशेष क्षार अनुक्रमों का, दूसरे क्रोमोसोम के एक निश्चित हिस्से पर विनिमय हो सकता है—इसका परिणाम होता है संतति में आनुवंशिक इकाइयों का कई प्रकार से

पुनर्चयन। यह वह प्रक्रिया है जिसके कारण किसी भी व्यक्ति में ढेर सारे विशिष्ट लक्षण दिखाई देते हैं। जब सूत्री विभाजन में किसी कायिक कोशिका में क्रासिंग ओवर होता है तो इसे कायिक उत्परिवर्तन कहते हैं। इस प्रकार का उत्परिवर्तन आदिम जीवों में बहुत कम पाया जाता है। उनमें क्रोमोसोम की संख्या बहुत कम होती है, प्रजनन अलैंगिक विधि द्वारा होता है, और डी एन ए की प्रतिकृति का निर्माण अत्यंत परिशुद्ध होता है। मनुष्य जैसे उच्च श्रेणी के जीवों में, प्रजनन, वृद्धि
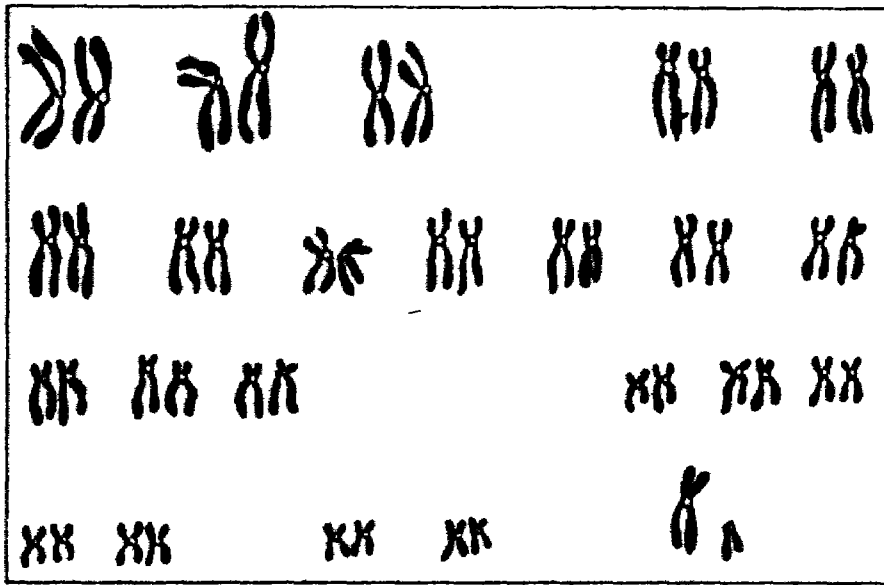
चित्र 6 क्रोमोसोम के तेईस जोड़े

और विकास की विधि अत्यंत जटिल होने के कारण इनमें कायिक उत्परिवर्तन के अवसर काफी अधिक होते हैं। इस प्रकार जटिल लैंगिक प्रजनन और आनुवंशिक तंत्र की जटिलता के आविर्भाव के बाद जीवों ने विकास के दौरान बूढ़े होने और और मृत्यु को प्राप्त होने का गुण अर्जित कर लिया।

यह स्पष्ट है कि प्रजनन क्रिया के पूरा हो जाने के बाद ही प्रकृति किसी जीव को समाप्त करने का निर्णय लेती है। स्पष्ट है कि किसी भी जीव का स्वाभाविक उद्देश्य है जीवित रहना और इस जीवित रहने का एक मात्र उद्देश्य है प्रजातियों का प्रवर्धन। यह मान लेने के बाद कि किसी प्रजाति का एकमात्र उद्देश्य अपना प्रवर्धन है तो फिर संतति को जन्म देने के पश्चात जनकों का विनाश क्यों ? मृत्यु के कारण प्रजातियों को क्या लाभ होता है ?

इन सवालों के जवाब का अनुमान लगाना कठिन नहीं है। यदि जीवों का अंत न होता और उनकी संख्या लगातार बढ़ती रहती तो पृथ्वी पर उनकी संख्या इतनी

अधिक हो जाती कि उनका जीवित रहना ही संकट में पड़ जाता। जीवित रहने के लिए आवश्यक आहार, आवास व अन्य संसाधनों के लिए भयानक होड़ होती।

आनुवंशिक रचना में अत्यधिक विभिन्नता लाने के लिए प्रकृति ने लैंगिक प्रजनन का चयन किया। इस प्रक्रिया में, बूढ़े होने और मृत्यु के लिए आनुवंशिक दुर्बलता आवश्यक नहीं होती जो प्रजनन के बाद आती है। मृत्यु परभक्षियों द्वारा भी हो सकती है (जिसमें एक प्रजाति के जीव दूसरी प्रजाति के जीवों का आहार करते हैं)। परंतु अगर इस पहलू को ही लें तो भी शारीरिक और कायिक शिथिलता के कारण बूढ़े सुगमतापूर्वक अपने परभक्षियों का शिकार हो जाते।

चित्र 7.

3

वृद्धावस्था का आरंभ

अस्सी वर्ष की आयु !
न आंखें बचीं,
न कान, न दांत,
न पैर, न दिमाग,
और जब सब कुछ कह और कर चुके
कितना विस्मयकारी है
उनके बिना किसी का जीवन

–90 वर्ष की आयु में पॉल क्लॉडिल

यह एक जैविक कथन है कि हर जीव की सहज नियति प्रजाति का प्रवर्धन करना है। जब तक यह प्रवर्धन अलैंगिक विधि द्वारा होता है, बूढ़े होने का नियम लागू नहीं होता। लेकिन जैसे ही एक बार लैंगिक प्रजनन आरंभ होता है, अन्य लक्षणों के साथ-साथ बुढ़ापा भी आवश्यक हो जाता है। दूसरे शब्दों में, एक बार संततियों के उत्पन्न होने के बाद, तंत्र स्वयं ही जनकों की आगे उपयोगिता समाप्त हो जाने को महसूस करता है। अतः बुढ़ापे की प्रक्रिया के आरंभ होने के लिए जैसे कोई स्विच ऑन हो जाता है जिसकी अंतिम पराकाष्ठा होती है आबादी से वृद्धों को हटा देना।

बाल सफेद होना और त्वचा में झुर्रियां पड़ने जैसे दिखाई देने वाले परिवर्तनों के अतिरिक्त शरीर में कोशिकीय स्तर पर या ऊतकों में भी परिवर्तन होते हैं। वास्तव में, बाहर से दिखाई देने वाले परिवर्तन कोशिका स्तर पर हुए परिवर्तनों का ही परिणाम होते हैं। सभी आवश्यक क्रियाओं जैसे श्वसन, हृदय क्रिया, गुर्दों की क्रिया, पेशीय क्रिया आदि में कायिक ह्रास होता है। यद्यपि चाहे कोई शरीर के अंदर

चित्र 8. झुर्रियां और सफेद बाल

हो रहे इन परिवर्तनों को अनुभव न करे, लेकिन व्यक्ति अपनी नियमित जांच कराए तो इन क्रियाओं में होने वाली कमी का पता लग सकता है।

शारीरिक परिवर्तन

जब कोई बच्चा जन्म लेता है और वयस्क होने से पहले के दौर से गुजरता है तो हम उसे बूढ़ा नहीं कहते। यद्यपि दर्शनशास्त्र के अनुसार 'जरावस्था या बुढ़ापा' उसी समय से आरंभ हो जाता है जब अंडाणु, शुक्राणु से मिलता है और युग्मनज बनता है। बड़ी संख्या में कोशिकाएं बनाने के लिए युग्मनज बहुत बार विभाजित होता है। इसके बाद किसी बिंदु पर इन कोशिकाओं से विभिन्न अंग बनने लगते हैं और अंत में शरीर बनता है जैसा कि हम जन्म के बाद बच्चे को देखते हैं। ये परिवर्तन वृद्धि, विकास और परिपक्वता कहलाते हैं और परिवर्तनों के इस संपूर्ण दौर के साथ एक सार्थक अर्थ जुड़ा होता है।

दूसरी ओर, जब एक पूर्ण विकसित वयस्क की शादी होती है और बच्चे होते हैं तो इसी बीच किसी बिंदु पर तथाकथित 'जरावस्था' के लक्षण उभरने लगते हैं।

पहले कनपटी के बाल सफेद होते हैं और उसके बाद अन्य स्थानों के। कुछ लोग खोपड़ी पर बाल न रहने की वजह से गंजे हो जाते हैं। त्वचा के नीचे वसा की कमी के कारण झुर्रियां पड़ जाती हैं। त्वचा भी पतली और रूखी हो जाती है। यह बहुत कम लचीली और भुरभुरी हो जाती है।

चित्र 9. आयु की विभिन्न अवस्थाओं में चेहरे

कुछ वैज्ञानिकों ने जीवन की आरंभिक अवस्थाओं से शुरू करके मृत्यु तक, जीव की क्रियाशीलता के पैटर्न में परिवर्तनों की तुलना ऊपर की ओर फेंके गए भाले से की है। आरंभ में यह तेजी से बढ़ता है, धीरे-धीरे इसकी गति कम होती जाती है, और यह रुक जाता है तथा फिर नीचे आने लगता है। जैसे ही यह जमीन के निकट पहुंचता है, गुरुत्वाकर्षण के कारण इसकी गति बढ़ जाती है। जन्म के बाद, बच्चे की वृद्धि और विकास की दर असाधारण रूप से अधिक होती है। किशोरावस्था में वृद्धि की दर कम होने लगती है और बाईस वर्ष की अवस्था में यह स्थिर होने लगती है। यह अवस्था तीस से पैंतीस वर्ष की आयु तक चलती है। फिर उसके बाद धीरे-धीरे जरावस्था के विभिन्न लक्षण उभरने लगते हैं। आयु के साथ-साथ इस क्षय की दर बढ़ती जाती है।

कुछ अन्य वैज्ञानिकों ने मनुष्य की तुलना अंतरिक्ष इंजीनियरों द्वारा छोड़े गए अंतरिक्ष यान से की है, जिसे अन्य उपग्रहों पर जाकर पृथ्वी पर सूचनाएं भेजने के लिए छोड़ा गया हो। यान के लक्ष्य तक पहुंचने तक वैज्ञानिक और इंजीनियर उसकी सभी कार्य-प्रणालियों के ठीक से काम करने के प्रति चिंतित रहते हैं। एक बार उद्देश्य पूरा हो जाने के बाद, वे यान की परवाह नहीं करते यद्यपि वह लगातार उड़ रहा होता है। यह कब तक उड़ेगा ? पहले कौन सा भाग खराब होगा ? प्रयोगकर्ता इसकी चिंता नहीं करते। ऐसा ही कुछ प्रकृति हमारे लिए अनुभव करती है, जिसका मूल उद्देश्य जातियों को प्रवर्धित करना ही लगता है, जिसके बाद वृद्धावस्था आरंभ हो जाती है।

इस प्रकार, वृद्धावस्था और उस प्रक्रिया का अंतिम लक्ष्य मृत्यु, किसी भी सामान्य स्वस्थ मनुष्य के जीवन में अचानक नहीं आतीं। मनुष्य में यह प्रक्रिया तीस वर्ष की आयु के आसपास आरंभ होती है और बढ़ती उम्र के साथ बढ़ती जाती है।

शारीरिक संघटन, ऊतकों और कोशिकाओं में परिवर्तन

मांसपेशियों और ऊतकों से बना शरीर, शारीरिक परिपक्वता प्राप्त करने के पश्चात चरम वृद्धावस्था तक धीरे-धीरे लगातार घटता है। यह घटकर वयस्क की तुलना में दो-तिहाई मात्र रह जाता है। हालांकि शरीर का भार आयु के साथ बढ़ता जाता है क्योंकि शरीर में जमा वसा और जल, भ्रूणीय और जन्मोत्तर विकास के दौरान नियमित रूप से घटने के बाद, बढ़ते हैं। सभी ऊतक और यहां तक कि त्वचा भी वृद्धावस्था के परिणामस्वरूप पानी से भर जाती है। ऐच्छिक मांसपेशियों का अपक्षय

संभवतया मांसपेशियों का उपयोग न होने और क्षीणता के कारण होता है, न कि पेशी तंतुओं के ह्रास के कारण।

शरीर के अंग, कोशिका और आण्विक स्तर पर होने वाले परिवर्तनों के दूसरे परिणाम होते हैं। शरीर पर आक्रमण करने वाले बाहरी जीवों से शरीर की रक्षा करने वाली थायमस ग्रंथि का जन्म के समय भार लगभग 200-250 ग्राम होता है। वयस्क होने के बाद यह सिकुड़ना शुरू करती है और साठ वर्ष के आसपास घटकर लगभग 3 से 5 ग्राम की रह जाती है। बूढ़ों के जल्दी-जल्दी बीमार होने के अनेक कारणों में से यह भी एक कारण है। एक बार सुरक्षा व्यवस्था के कमजोर हो जाने के बाद, व्यक्ति सभी प्रकार के संक्रमणों के प्रति संवेदनशील हो जाता है।

शरीर की बनावट दो प्रकार के तंतुमय प्रोटीन अणुओं कोलेजन और इलैस्टिन पर निर्भर करती है। शरीर की लगभग एक तिहाई प्रोटीन कोलेजन होती है जो त्वचा, अस्थि और टेंडन में पाई जाती है। कोलेजन निर्माण की दर युवावस्था में तेज होती है और बाद में जीवन भर घटती जाती है। अघुलनशील कोलेजन की मात्रा आयु के साथ बढती जाती है जिसके परिणामस्वरूप शरीर कठोर हो जाता है और उसमें कड़ापन आ जाता है।

इसके बाद रक्त का निर्माण करने वाले ऊतकों में स्तंभक कोशिकाएं होती हैं जो युवावस्था में चोट लगने पर तुरंत सक्रिय हो जाती हैं। लेकिन आयु बढ़ने के साथ इनकी क्षमता कम हो जाती है। रक्त-निर्माणकर्ता स्तंभक कोशिकाओं के अपक्षय के कारण, वृद्धावस्था में रक्तअल्पता (एनीमिया) का खतरा बढ़ जाता है।

यह आचश्चर्यजनक है कि 30 वर्ष की आयु के बाद व्यक्ति की लंबाई कम होने लगती है। साठ वर्ष की आयु होने पर, लंबाई लगभग 3/4 इंच कम हो जाती है। पेशी कोशिकाओं के नष्ट होने और उनकी प्रतिपूर्ति न होने के कारण मांसपेशियों का भार कम होने लगता है। धीरे-धीरे इन कोशिकाओं का स्थान वसा ले लेती है। एक अनुमान के अनुसार सत्तर वर्ष की आयु तक आधे से अधिक पेशी भार कम हो जाता है।

वृद्धावस्था का सबसे विलक्षण मनोवैज्ञानिक लक्षण है लघुअवधि स्मृति का ह्रास और प्रत्युत्तर में अधिक समय का लगना। इन दोनों कारणों से 'बौद्धिकता' के मानक परीक्षणों के दौरान वृद्ध व्यक्तियों का स्तर निम्न पाया जाता है। शब्दावली, सामान्य ज्ञान और भली-भांति अभ्यास की गई क्रियाओं पर आधारित परीक्षणों में आयु बढ़ने का प्रभाव नगण्य होता है, लेकिन आयु में वृद्धि उन परीक्षणों में स्पष्ट हो जाती है जिनमें जीवन के आरंभिक काल से संबंधित घटनाओं का स्थान नवीन घटनाएं ले लेती हैं।

दिखाई देना और सुनाई देना, दोनों ही कम हो जाते हैं। आमतौर पर यह देखा गया है कि पचास और साठ वर्ष की अवस्था के लोग बार-बार लोगों से पूछते रहते हैं कि क्या कहा था। इसी तरह चालीस वर्ग की आयु के बाद देखने की क्षमता कम हो जाती है। देखने में सहायक दृश्य तंत्रिका तंतुओं की संख्या लगभग उसी दर से घटने लगती है जिस दर से घ्राण तंत्रिकाओं की घटती है जो जन्म के समय मौजूद संख्या की लगभग 25 प्रतिशत रह जाती है। अधिकांश लोगों की निकट की नजर कमजोर हो जाती है। परिणामस्वरूप, वे पढ़ने की वस्तु को दूरी पर रखकर पढ़ते हैं। चूंकि पढ़ना कठिन हो जाता है, आंखों पर पढ़ने का चश्मा लग जाता है। पढ़ने का चश्मा और कुछ नहीं बल्कि अक्षरों को बड़ा करके दिखाने की युक्ति है जो एक निश्चित दूरी से पढ़ना आसान कर देती है। आंख का लैंस भी कठोर होने लगता है। यही होता है मोतियाबिंद, जिसका पता धुंधला दिखाई देने पर लगता है। लगभग 50 प्रतिशत लोग साठ वर्ष की आयु में मोतियाबिंद से पीड़ित होते हैं।

निकट दृष्टि या मायोपिया के कारण दूरी पर स्थित वस्तुओं को देखने की क्षमता भी कम हो जाती है। यह वास्तव में आंख की सिलियरी पेशियों के कमजोर हो जाने के कारण और लैंस की तरलता में कमी के कारण होता है। चूंकि लैंस जीवन भर एक निश्चित दर से बढ़ते रहते हैं, वृद्धावस्था में वह वृद्धि दर कम हो जाती है। यह भी दूर की चीजों को देखने की क्षमता कम करता है।

आयु के साथ आंख की अंधेरे के प्रति अनुकूलन की क्षमता (अर्थात् कम प्रकाश वाले स्तरों पर संवेदनशीलता बढ़ना) कम हो जाती है। इस क्षमता में कमी को कुछ हद तक आक्सीजन में सांस लेकर दूर किया जा सकता है।

पुरुषों में, गंध के प्रति संवेदी, घ्राण तंत्रिका तंतुओं की संख्या, 90 वर्ष की अवस्था में जन्म के समय की संख्या की 25 प्रतिशत रह जाती है। आयु के छठे और सातवें दशक के दौरान गंध और स्वाद की अनुभूति में कमी आ जाती है। चूंकि व्यक्ति अनेकों प्रकार के खाद्य पदार्थों के सुवास को प्राप्त करने में असमर्थ होता है, इसलिए आहार संबंधी आदतें बदल जाती हैं। इस कारण हो सकता है कि वह आवश्यकता से कम कैलोरी प्राप्त कर पाए—परिणाम होता है अपर्याप्त पोषण।

बूढ़े व्यक्तियों की सोने की आदतें भी बदल जाती हैं। लंबी नींद की आवश्यकता कम हो जाती है। वे कम समय तक सोते हैं और नींद भी गहरी होने के वजाय हल्की हो जाती है। ऐसा माना जाता है कि ये परिवर्तन कायिक और मनोवैज्ञानिक दोनों कारणों से होते हैं। सोने के ढंग में परितर्वन बहुत से लोगों में मनोवैज्ञानिक समस्याएं उत्पन्न करता है। उन्हें लगता है कि उन्हें अनिद्रा रोग हो गया है, और वे कभी-कभी औषधियों का सहारा लेने लगते हैं।

चित्र 10. एक बूढ़ी स्त्री

मानव शरीर को भोजन से ऊर्जा मिलती है जिसे वह खाता है। शरीर की कोशिकाओं में भोजन को ऊर्जा में परिवर्तित करने के लिए बहुत सी रासायनिक क्रियाएं होती हैं। इनके अतिरिक्त, आहार से प्राप्त अनेक पदार्थों से शरीर और भी बहुत से पदार्थ बनाता है। ये सभी क्रियाएं एंजाइम नामक जैव-उत्प्रेरकों की सहायता से अत्यंत कुशलता और विशिष्टता के साथ संपन्न होती हैं। कुछ यौगिकों के बनने, और कुछ के नष्ट होने के ये रासायनिक परिवर्तन, संयुक्त रूप से चयापचयी कहलाते हैं। जिस दर से ये विभिन्न क्रियाएं होती हैं, उसे चयापचय दर कहते हैं। चयापचय दर, शरीर की समग्र वृद्धि और क्षमता को प्रभावित करती है।

पचीस वर्ष की आयु के बाद शरीर में चयापचय की गति धीमी पड़ने लगती है। इस उम्र के बाद, शरीर के भार को स्थिर रखने के लिए आवश्यक कैलोरी की मात्रा (आहार से प्राप्त होने वाली ऊर्जा को आमतौर से कैलोरी के नाम से जाना जाता है) कम हो जाती है। एक अनुमान के अनुसार, हर दस वर्ष में कैलोरी की आवश्यकता में 2 प्रतिशत की कमी आती है। हालांकि बहुत से लोग वयस्क

अवस्था के दौरान और उसके बाद भी मोटे हो जाते हैं, क्योंकि वे आवश्यकता से अधिक कैलोरी लेना जारी रखते हैं।

मस्तिष्क के भार में वयस्क अवस्था से वृद्धावस्था के बीच में 20 प्रतिशत की कमी हो जाती है। मस्तिष्क में लगभग 10 कोशिकाएं होती हैं, जिन्हें न्यूरॉन कहते हैं। तीस या पैंतीस वर्ष के बाद, ये कोशिकाएं 100,000 प्रतिदिन की दर से नष्ट होने लगती हैं। चूंकि इन कोशिकाओं की संख्या बहुत अधिक होती है, अतः सामान्य, स्वस्थ व्यक्ति में उनकी कमी का पता नहीं लगता। वृद्धावस्था में भी कोशिकाएं काम करती रहती हैं। हालांकि गहन परीक्षणों से मानसिक क्रियाओं, विशेष रूप से लघुअवधि स्मृति, में कमी का पता चला है। फिर भी, मानसिक विकलांगता वृद्धावस्था का अंतिम लक्षण है।

शारीरिक तंत्र पर वृद्धावस्था का प्रभाव

वृद्धावस्था अपने साथ ढेर सारी बीमारियां लेकर आती है। यह बिलकुल स्वाभाविक है कि अंगों की कमजोरी अनेक समस्याएं उत्पन्न करती है।

प्रतिरक्षा तंत्र

शरीर का एक प्रमुख आण्विक सूचना तंत्र है प्रतिरक्षा तंत्र। थायमस आधारित उपतंत्र सूक्ष्मजीवों के आक्रमण के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करने के लिए बना होता है। प्रतिरक्षा तंत्र कैंसर जैसी भयानक बीमारी के विरुद्ध शरीर की रक्षा करने में उलझा रहता है जो आमतौर से वृद्ध लोगों को आ घेरती है। अध्ययनों से पता लगा है कि वृद्ध लोगों में इस बीमारी से पीड़ित होने की संभावनाएं अधिक होती हैं। कैंसर, शरीर में कोशिकाओं के अनियंत्रित बहुगुणन की अवस्था है। कैंसरग्रस्त कोशिकाएं न केवल स्वयं तेजी से बहुगुणित होती हैं, बल्कि पड़ोसी ऊतकों पर भी आक्रमण करती हैं और उनके ऊपर फलती-फूलती हैं। इसके बाद वे शरीर के दूसरे भागों की ओर बढ़ती हैं और एक नयी जगह पर बहुगुणित होने लगती हैं, जो एक महत्वपूर्ण अंग भी हो सकता है, तथा इस प्रकार उसके कार्य में व्यवधान उपस्थित कर देती हैं। सारी दुनिया में यह पता लगाने के लिए अनुसंधान किए जा रहे हैं कि सामान्य कोशिकाएं कैंसरग्रस्त क्यों हो जाती हैं। यह समझा जाता है कि कैंसर और वृद्धावस्था दोनों की आनुवंशिक पदार्थ डी एन ए अणु में किसी परिवर्तन के कारण होते हैं। हालांकि यह स्पष्ट नहीं है कि कौन से परिवर्तन कैंसर और कौन से कोशिका की मृत्यु के लिए जिम्मेदार होते हैं।

हृदयवाहिका तंत्र

पैंसठ वर्ष की आयु के बाद 50 प्रतिशत लोगों की मृत्यु हृदय रोगों के कारण होती हैं। पता लगने योग्य बीमारियों के न होने पर, आयु के बढ़ने के साथ हृदय में घातक परिवर्तन होते हैं। संरचनात्मक परिवर्तनों में शामिल हैं पेशी तंतुओं में धीरे-धीरे ह्रास, साथ ही वसा, और संयोजी ऊतकों का हृदय में जमा होना। आयु बढ़ने के साथ हृदय की क्षमता में भी धीरे-धीरे कमी आती जाती है। बीस से नब्बे वर्ष की आयु के बीच हृदय द्वारा पंप किए जाने वाले रक्त की मात्रा 50 प्रतिशत कम हो जाती है। आराम की अवस्था में आयु के साथ हृदय गति में विशेष अंतर नहीं आता। प्रत्येक स्पंद के दौरान हालांकि वृद्धावस्था में हृदय के पेशी तंतु उतनी तेजी से संकुचित नहीं होते जितने की युवावस्था में होते हैं। हृदय के कार्य की दर में यह कमी, कोशिकाओं में उपस्थित कुछ एंजाइमों की क्रियाओं में आयु से संबंधित कमी के करण होती है। सेल्यूलर एंजाइम पेशीय संकुचन के लिए आवश्यक ऊर्जा उत्पन्न करते हैं।

धमनी काठिन्य (आर्टीरिओस्क्लीरॉसिस) अर्थात् धमनियों के कड़े होने की घटनाएं आयु बढ़ने के साथ बढ़ता है। यह धमनियों की भीतरी सतह पर वसा और अन्य पदार्थों के जमने के रूप में दिखाई देता है। रक्त वाहिनियां लचीली हो जाती हैं और संयोजी ऊतकों में वृद्धि से वड़ी वाहिनियों की दीवारें मोटी और कड़ी हो जाती हैं। लचीलेपन में कमी के साथ ही रक्त प्रवाह में भी अवरोध होने लगता है जिससे रक्तचाप बढ़ जाता है। इस प्रकार रक्त के बहाव को ठीक बनाए रखने के लिए हृदय का काम भी बढ़ जाता है। औसतन, सामान्य शारीरिक भार वाले व्यक्तियों की तुलना में मोटे लोगों का रक्तचाप अधिक होता है। चूंकि आयु के साथ मोटापा बढ़ता है (कम से कम पचास से साठ वर्ष की आयु तक), इसलिए यह समझा जाता है कि इसके कारण आयु बढ़ने के साथ रक्तचाप बढ़ता है।

पाचन तंत्र

आयु बढ़ने के साथ दांत गिर जाते हैं और मुंह की बीमारियां बढ़ जाती हैं। लेकिन पानी के बेहतर फलुओरीकरण और बचपन में दांतों की बेहतर देखभाल से दांतों को गिरने से रोका जा सकता है।

आयु के साथ जब अमाशय द्वारा हाइड्रोक्लोरिक अम्ल और अन्य पाचक रसों का स्रवण कम हो जाता है तो भी बूढ़े लोगों के पाचन तंत्र को कोई विशेष क्षति नहीं होती है। वसा के अवशोषण में कुछ कमी अवश्य आती है, लेकिन इसका कुछ

विशेष महत्व नहीं है। पोषण में कमी, कम खाने की आदत, या प्रोटीन, कैल्सियम, लौह और विटामिनों की कमी के कारण ही हो सकती है। वृद्ध व्यक्तियों के भोजन में प्रोटीन, कैल्सियम, लौह, विटामिन ए और थायमीन की मात्रा बढ़ाकर और खाने की आदतों को नियमित बनाकर उनमें पोषण संबंधी कमियों को दूर किया जा सकता है।

तंत्रिका तंत्र

बढ़ती उम्र के साथ मस्तिष्क में न्यूरॉनों (तंत्रिका कोशिकाओं) की संख्या में कुछ कमी आ जाती है जिसका परिणाम होता है प्रत्युत्तर में कमी और स्मृति-दोष। चूंकि मस्तिष्क के विषय में कुछ अधिक जानकारी नहीं है, इसलिए निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता है कि न्यूरॉन की संख्या में कमी का इससे कोई संबंध है। सौ वर्षीय लोगों में भी पूरी तरह कार्यशील तंत्रिका तंत्र देखा गया है। हां, वृद्ध लोगों में प्रत्युत्तर में सामान्य कमी देखी गई है। सहजक्रिया निस्तेज हो जाती हैं और तंत्रिकाओं से स्पंदों के संवहन की गति भी धीरे-धीरे कम होती जाती है।

इसी तरह, ऐसे और भी बहुत से तंत्रिका रोग हैं जो पचास या साठ वर्ष की आयु के बाद लोगों में प्रकट होते हैं। पार्किन्सन रोग (प्लेट 1), अल्ज़ेमीर रोग, जराजन्य स्मृतिभ्रंश (प्लेट 3) और आघात इन्हीं के अंतर्गत आते हैं।

पार्किन्सन रोग का प्रमुख लक्षण है अस्थि पेशियों का अनियंत्रित संकुचन, जिसके कारण झटके लगते हैं। इससे व्यक्ति को चलने-फिरने में कठिनाई होती है और तब वह कुछ आगे झुककर धीरे-धीरे चलता है। आवाज धीमी हो जाती है। यह रोग दीर्घकालिक होता है और बढ़ता जाता है तथा किन्हीं अज्ञात कारणों से स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में ज्यादा होता है। यह रोग मस्तिष्क के मूल गुच्छिका नामक भाग के क्षतिग्रस्त होने के कारण होता है। इस अवस्था का सबसे प्रभावी उपचार है एल-डोपा नामक औषधि का दिया जाना।

वर्तमान स्मृति की क्षति, त्रिविम दिशाभ्रम और स्वतः भावनात्मक प्रतिक्रिया में कमी अल्ज़ेमीर रोग के प्रारंभिक लक्षण हैं। धीरे-धीरे सुनाई कम देने लगता है और पढ़ने, लिखने और गणना करने की क्षमता में भी कमी आ जाती है। रोगी बहुत संभ्रमित हो जाता है और यहां तक कि अपने परिवार के लोगों को भी नहीं पहचानता। अंतिम अवस्थाओं में रोगी को दौरे पड़ने लगते हैं और वह बोल भी नहीं पाता। इन सभी लक्षणों को कुल मिलाकर स्मृतिभ्रंश कहते हैं। इस रोग की आनुवंशिकी को समझने और इसे रोकने के लिए काफी अनुसंधान जारी हैं। हालांकि

यह रोग गोरे लोगों में काफी व्यापक है, भारत में इस बीमारी के संबंध में विश्वसनीय आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं।

जराजन्य स्मृतिभ्रंश, 'जैसा कि नाम से स्पष्ट है, वृद्धावस्था में मानसिक क्रियाओं के ह्रास को कहते हैं। जराजन्य स्मृतिभ्रंश के लक्षण, अल्ज़ेमीर रोग के समान ही होते हैं। बस, जराजन्य स्मृतिभ्रंश का पैंसठ वर्ष की आयु के बाद ही पता चलता है।

हृदयवाहिका दुर्घटना या आघात वृद्धावस्था की एक सामान्य दुष्क्रिया है। आघात तब होता है जब मस्तिष्क में जाने वाली रक्तवाहिनी अवरुद्ध हो जाती है या फट जाती है। मस्तिष्क के उस भाग की रक्त आपूर्ति प्रभावित होती है और परिणाम होता है मस्तिष्क क्षय। आघात के तंत्रिकीय प्रभाव, प्रभावित स्थान और क्षति की मात्रा पर निर्भर करते हैं, इसलिए ये सब लोगों में अलग-अलग होते हैं। वृद्ध व्यक्ति में बहुधा देखा गया पक्षाघात, आघात का ही परिणाम है। अनेक परिस्थितियों में मृत्यु भी हो सकती है।

अंतःस्रावी तंत्र

अनेक शारीरिक क्रियाओं के नियमन के लिए हार्मोन अत्यंत आवश्यक होते हैं। अंतःस्रावी ग्रंथियों के क्षतिग्रस्त होने को भी वृद्धावस्था का एक कारण समझा जाता था, लेकिन अब यह नहीं माना जाता।

यह जानकारी है कि अग्न्याशय द्वारा स्रावित हार्मोन इन्सुलिन, शरीर में शर्करा और अन्य पोषक तत्त्वों के इस्तेमाल और नियमन में सहायता करता है। जब अग्न्याशय इन्सुलिन की उपयुक्त मात्रा उत्पन्न करने में अक्षम होता है तो मधुमेह हो जाता है। दूसरे शब्दों में, ऊर्जा तथा अन्य कामों के लिए, कोशिकाएं ग्लूकोज का उपयोग नहीं कर पातीं। यह या तो इन्सुलिन के कम उत्पादन के कारण होता है जो कोशिकाओं में ग्लूकोज को ऊर्जा में बदलता है, या फिर हार्मोन के ठीक से काम न करने के कारण होता है, जिसके परिणामस्वरूप कोशिकाएं न तो ठीक से ग्लूकोज ग्रहण कर पाती हैं और न उसका चयापचय कर पाती हैं। दोनों ही तरह से ग्लूकोज की मात्रा बढ़ जाती है और कभी-कभी इन्सुलिन रक्त में भी मिलने लगता है। चूंकि ग्लूकोज उपलब्ध नहीं होता, कोशिकाएं ऊर्जा के लिए वसा और प्रोटीनों का उपयोग करके उन्हें खत्म करने लगती हैं, जिससे अनेक कठिनाइयां उत्पन्न हो जाती हैं। कभी-कभी बच्चों में भी एक प्रकार का मधुमेह पाया जाता है। हालांकि अधिकतर यह रोग बढ़ती उम्र के साथ जुड़ा होता है।

प्रजनन तंत्र

मादा लैंगिक हार्मोन (एस्ट्रोजेन) और न लैंगिक नर हार्मोन (एन्ड्रोजन) दोनों का स्रवण, पचास से नब्बे वर्ष की आयु तक धीरे-धीरे कम होता जाता है। हालांकि पुरुषों और स्त्रियों दोनों में ही लैंगिक क्रियाशीलता कम होती जाती है, लेकिन इसके लिए कोई एक जैसा या दृढ़ नियम नहीं है। यह अलग-अलग लोगों में अलग-अलग होता है।

अस्थि तंत्र

वृद्धावस्था के कारण, हड्डियों में कैल्सियम और खनिजों की मात्रा कम हो जाती है और हल्के से गिरने पर भी उनके टूटने का डर होता है। नौजवानों की अपेक्षा टूटी हुई बूढ़ी हड्डी धीरे-धीरे जुड़ती है। ऑस्टिओपोरोसिस अर्थात् कैल्सियम और खनिजों की कमी स्त्रियों में रजोनिवृत्ति के बाद आम पाई जाती है और रीढ़ की हड्डी में विशेष रूप से पाई जाती है। सभी प्रकार का कमर दर्द, इस रोग का प्रमुख लक्षण है जिसका उपचार अधिक मात्रा में कैल्सियम और चयापचयी हार्मोन लेकर किया जा सकता है। जोड़ों की क्षमता भी आयु के साथ घटती है और गठिया का प्रकोप बढ़ जाता है।

श्वसन तंत्र

आयु के साथ सांस लेने के बाद फेफड़ों से वायु को बाहर निकालने की क्षमता, सीने के अस्थि पिंजर के कड़े और मांसपेशियों के शक्तिहीन हो जाने के कारण कम हो जाती है सीने का अस्थि पंजर और मांसपेशियां ही श्वसन के समय सीने को गतिशील बनाती हैं।

वातस्फीति (वायु से फेफड़ों का अस्वाभाविक प्रसार) एक फेफड़ों का रोग है जो पैंतालीस से पैंसठ वर्ष की आयु के बीच अधिक पाया जाता है। श्वसनी शोथ (ब्रोंकाई का प्रदाह या शोथ) भी इसी आयु में अधिक होता है।

गुर्दे

गुर्दे रक्त से व्यर्थ पदार्थों को अलग कर के और मूत्र बनाकर, व्यर्थ पदार्थों को शरीर से बाहर निकालते हैं। उम्र बढ़ने के साथ, गुर्दों की सान्द्रण क्षमता कम हो जाती है जिससे व्यर्थ पदार्थों को बाहर निकालने के लिए अधिक मात्रा में पानी पीना जरूरी होता है। गुर्दे की सान्द्रण क्षमता में कमी, कुछ-कुछ गुर्दे के कार्यकारी

चित्र 11. अ. वृद्धावस्था प्रक्रिया की अलार्म घड़ी

घटकों (नेफरॉनों) में कमी होने, और क़ोशिकीय एंजाइमों की घटी क्षमता के कारण होती है।

यह स्पष्ट है कि वृद्धावस्था की प्रक्रिया अचानक नहीं होती, बल्कि वास्तव में प्रजनन काल में ही आरंभ हो जाती है और समय के साथ लगातार बढ़ती जाती है। इस दुर्बल होने की प्रक्रिया की किसी अवस्था में, शरीर अनेक आवश्यक क्रियाओं को करते रहने की व्यवस्था नहीं कर पाता; इस प्रकार होती है जरावस्था और अंत में मृत्यु।

तब क्या हम वृद्धावस्था प्रक्रिया की तुलना एक घड़ी से कर सकते हैं ? वास्तव में शरीर के अंदर एक जैविक घड़ी होती है जो तीस से चालीस वर्ष की आयु के बाद विभिन्न अंगों और कोशिकाओं को बताती है कि उनका समय पूरा

हो गया है। बिलकुल किसी एक खास समय के लिए सैट की गयी अलार्म घड़ी की तरह, शरीर का एक अपना समय होता है जब अपकर्ष शुरू होता है।

दूसरी ओर, शरीर में स्थित घड़ी को घड़ी की कसी हुई स्प्रिंग की तरह भी माना जा सकता है। तब वृद्धावस्था, स्प्रिंग के धीरे-धीरे खुलने की तरह है और एक समय बाद, स्प्रिंग काफी ढीली हो जाती है और घड़ी अनियमित समय दिखाने लगती है तथा अंत में रुक जाती है।

वैज्ञानिक आण्विक स्तर पर इस टिकटिक के रहस्य को उजागर करने के लिए मानव शरीर की जांच कर रहे हैं।

चित्र 11 ब. अनेक बीमारियां एक वृद्ध व्यक्ति पर आक्रमण कर रही हैं

4

समय की चाबी

प्रार्थना है, मेरा उपहास मत करो।
मैं बहुत अविवेकी, अनुरक्त बूढ़ा व्यक्ति हूं।
अस्सी और उससे अधिक
न एक घंटा ज्यादा न कम।
और, स्पष्ट कहूं तो
मैं सही मानसिक अवस्था में नहीं हूं।

–किंग लीयर में शेक्सपीयर

''उसकी पत्नी उससे कहीं ज्यादा बड़ी लगती है।'' ''पिछले कुछ महीनों में वह बहुत तेजी से बूढ़ा हुआ है।'' हम अकसर ये टिप्पणियां सुनते हैं जो इसका संकेत है कि अलार्म घड़ी चालू हो गयी है। वह क्या है जो अलार्म घड़ी को चालू करता है या स्प्रिंग को ढीला करता है ? इस प्रश्न का सही उत्तर पाने के लिए वैज्ञानिक शरीर में होने वाले परिवर्तनों का विश्लेषण करते रहे हैं। अनेक वैज्ञानिकों ने वृद्धावस्था के संभावित कारण या सिद्धांत प्रतिपादित किए हैं।

वृद्धावस्था से संबंधित अधिकांश सिद्धांत, हमारे शरीर के तीन मूल जैविक घटकों में होने वाले परिवर्तनों पर आधारित हैं। एक घटक शरीर की वे कोशिकाएं हैं जो विभाजित होती रहती हैं और जब तक व्यक्ति जीवित रहता है, नयी कोशिकाएं उत्पन्न करती रहती हैं। यह शरीर की विभिन्न प्रकार की अधिकांश कोशिकाओं के लिए सत्य है। दूसरी प्रकार की कोशिकाएं वे हैं जो भ्रूण की आरंभिक अवस्था में सक्रिय रूप से विभाजित होती हैं किंतु जन्म के बाद उनका विभाजन रुक जाता है। इन कोशिकाओं को आमतौर से उत्तर-सूत्री कोशिकाएं कहते हैं (चूंकि वे अपने जीवन के अंतिम सूत्री विभाजन से गुजर चुकी होती हैं और अब

सूत्री विभाजन के योग्य नहीं रह जातीं)। तंत्रिका कोशिकाएं और अस्थि पेशी कोशिकाएं इन कोशिकाओं के विशेष उदाहरण हैं। शरीर में कोशिकाओं के बीच अंतरकोशिकीय पदार्थों के बने बड़े-बड़े अकोशिकीय क्षेत्र भी होते हैं, जो तीसरा घटक बनाते हैं। कोलेजन नामक प्रोटीन, ऐसा ही एक प्रमुख अंतरकोशिकीय पदार्थ है। यह त्वचा, उपास्थि, टेन्डन और अन्य संयोजी ऊतकों को संबल प्रदान करता है।

ये तीनों घटक शारीरिक नियंत्रणों से संबंधित होते हैं जो शरीर में क्रियाशील होते हैं। कुछ लोग महसूस करते हैं कि विभाजित होती हुई कोशिकाओं में परिवर्तन प्रमुख होते हैं जबकि अन्य विश्वास करते हैं कि विभाजित न होने वाली कोशिकाओं में परिवर्तन अत्यंत आवश्यक होते हैं।

आज तक प्रतिपादित वृद्धावस्था के विभिन्न सिद्धांतों को मोटे तौर पर दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—वे जो यह मानते हैं कि हम अपने जीवनकाल में किसी एक विशेष समय पर बूढ़े होने के लिए पूर्व प्रोग्रामित होते हैं, और दूसरे वे जो मानते हैं कि वृद्धावस्था की प्रकृति स्वैच्छिक होती है और अनिश्चित घटनाओं के परिणामस्वरूप होती है, जो समय के साथ शरीर में होती हैं। निश्चय ही, एक वर्ग के सिद्धांत दूसरे वर्ग के सिद्धांतों में व्याप्त प्रतीत होते हैं।

साधारण तौर पर 'प्रोग्रामित वृद्धावस्था' के अंतर्गत आने वाले सभी सिद्धांत इस वास्तविकता से प्रभावित हैं कि जीवों की विभिन्न प्रजातियों की जीवन अवधि भिन्न होती है और एक प्रजाति के सभी जीवों की जीवन अवधि लगभग समान होती है। उदाहरण के लिए, मेफ्लाई केवल एक दिन, घरेलू मक्खी तीस दिन, चूहा तीन वर्ष, कुत्ता बारह वर्ष, घोड़ा पचीस वर्ष, हाथी साठ वर्ष और मनुष्य सत्तर वर्ष जीवित रहता है। यदि चूहे के जीवन के हर सप्ताह को मनुष्य के छह माह के बराबर मान लिया जाए तो वृद्धावस्था की प्रक्रिया दोनों जातियों में समांतर हो जाती है। किन्हीं भी दो अन्य जातियों के बीच भी ऐसे ही तुलनात्मक पैमाने बनाए जा सकते हैं। इसका अर्थ है कि हर जाति में जीवन की तीन प्रमुख अवस्थाएं होती हैं—विकास, प्रजनन और जरावस्था। अंतर केवल हर अवस्था की अवधि में होता है। उदाहरण के लिए एक चूहा जन्म के बाद लगभग तीन सप्ताह तक मां के दूध पर पलता है। इसके बाद वह स्वतंत्र रूप से बाहर का भोजन खा सकता है ताकि वह उसे 6 माह में युवा बना सके। इसका प्रजनन काल लगभग छह माह के लिए होता है जिसके बाद से वृद्धावस्था के लक्षण प्रकट होने लगते हैं। आमतौर से दो वर्षों के बाद यह जीव कभी भी मर जाता है।

एक मानव शिशु लगभग छह माह तक मां के दूध पर पलता है और कभी-कभी यह स्तनपान डेढ़ से दो वर्षों तक चलता है। वयस्क अवस्था बीस वर्षो में आती है। प्रजनन काल बीस वर्षो तक चलता है। तब वृद्धावस्था के लक्षण प्रकट होते हैं। यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि सभी जातियों में जीवन के मुख्य पड़ाव समान ही होते हैं। यद्यपि, प्रत्येक पड़ाव को पार करने का समय अलग होता है और प्रत्यक्ष रूप से यही जीवनकाल का निर्धारण करता है।

मनुष्य तथा और लंबे समय तक जीने वाले अन्य जानवरों को प्रजनन परिपक्वता प्राप्त करने में अधिक समय लगता है। विकास काल और प्रजनन काल की लंबाई का निर्धारण कौन करता है ? यह स्पष्ट है कि विकास के दौरान ये लक्षण प्राप्त होते हैं और इस प्रकार, निर्धारकों की प्रकृति आनुवंशिक होती है अर्थात् जीवनकाल जीनों में प्रोग्रामित होता है।

इस विश्वास को, कि विभिन्न प्रजातियों के लिए वृद्धावस्था की घटना तथा साथ ही निश्चित जीवनकाल का आधार आनुवंशिक होता है, लगभग तीस वर्ष पहले लियोनार्ड हेफ्लिक नामक अमेरिकन वैज्ञानिक द्वारा की गई अत्यंत महत्वपूर्ण खोज से जबरदस्त प्रोत्साहन मिला। कभी यह विश्वास किया जाता था कि यदि पर्याप्त पोषण मिलता रहे तो प्रयोगशाला संवर्धों में बनी कोशिकाएं, लाजिमी रूप से अमर होती हैं। लेकिन हेफ्लिक ने दिखाया कि ऐसा केवल दुर्दम या कैंसर कोशिकाओं के लिए ही सही है।

जब उपयुक्त स्थितियों में, प्रयोगशाला में द्विगुणित कोशिकाओं को पैट्रीडिश से संवर्धित किया जाता है, तो उनकी तब तक वृद्धि होती रहती है जब तक बर्तन में उनकी एक परत नहीं बन जाती। जब वे इस अवस्था तक पहुंच जाती हैं तो कहते हैं कि वे संप्रवाह पर पहुंच गयी हैं। अब यदि इन कोशिकाओं के एक भाग को बाहर निकाल लिया जाए और वृद्धि के लिए उपयुक्त एक दूसरे माध्यम वाले बर्तन में रख दिया जाए तो उनमें एक बार फिर वृद्धि होने लगती है और वे संप्रवाह पर पहुंच जाती हैं। यह प्रक्रिया एक व्यतिक्रम बनाती है। यदि आधी संप्रवाह कोशिकाओं को इस प्रकार एक नए बर्तन में स्थानांतरित कर दिया जाए, तो इसे 2 : 1 विभाजन कहते हैं, अर्थात् कोशिकाओं से प्रत्येक व्यतिक्रम में दो गुना होने की आशा की जाती है।

हेफ्लिक और उसके सहयोगियों ने पाया कि जब उन्होंने मानवीय भ्रूण ऊतक से फाइब्रोब्लास्ट नामक कोशिकाओं को इस प्रकार से संवर्धित किया तो वे कोशिकाएं पचास बार दो गुना हुईं और फिर रुक गई, चाहे उन्हें कितने ही उपयुक्त और नए माध्यमों में स्थानांतरित क्यों न किया गया। इन कोशिकाओं ने अब

जराजन्यता और मृत्यु के लक्षण दिखाए। इसका अर्थ हुआ कि भ्रूण फाइब्रोब्लास्ट कोशिकाएं पचास बार विभाजित हो सकती हैं, उससे अधिक नहीं। कुछ कोशिकाओं ने व्यतिक्रम के दौरान वृद्धावस्था के लक्षण दिखाई दिए और अन्य अनेक कारणों से मर गयीं। जिन कोशिकाओं में विभाजन जारी रहा और वृद्धि हुई, वे भी पचास बार ही विभाजित हुई। उत्साह तब बढ़ा जब यह देखा गया कि मान लो एक भ्रूण कोशिका बीस बार विभाजित हुई और फिर उसे कुछ महीनों या वर्षो के लिए फ्रीजर में रख दिया गया, परंतु इन कोशिकाओं को यह याद रहा कि वे कहां तक विभाजित हुई थीं। जब उन्हें सामान्य तापक्रम पर लाया गया और संवर्धित किया गया, वे तीस बार और विभाजित हुईं और इससे ज्यादा नहीं।

इतना ही नहीं, जब कोशिकाएं अधिक उम्र के व्यक्तियों से ली गयीं तो, वे कुछ ही बार विभाजित हुई और फिर रुक गईं। इसका अर्थ हुआ कि कोशिका के दो गुना होने का क्रम, दाता की आयु पर निर्भर करता है। इन प्रयोगों से स्पष्ट पता चलता है कि किस कोशिका को कितनी बार विभाजित होना है, यह सूचना पहले से ही उस कोशिका में लिखी होती है। उसे हेफ्लिक सीमा या अधिकतम जीवनकाल कहते हैं। विभिन्न प्रजातियों के आनुवंशिक रूप से प्रोग्रामित अधिकतम जीवनकाल को समझाने के लिए अनेक सिद्धांत प्रतिपादित किए गए हैं।

दूसरी ओर, वृद्धावस्था से संबंधित अनुमानों पर आधारित सिद्धांत बताते हैं कि वृद्धावस्था की प्रक्रिया, शरीर के अंदर और बाहर घटने वाली संयोगिक घटनाओं से प्रभावित होती है। उदाहरण के लिए, विकिरण उद्भासन, आहार संबंधी आदतें और जलवायु संबंधी परिस्थितियां। हालांकि, यह भी संभव है कि ये कारक केवल प्रक्रिया को नियमित करते हैं और इन घटनाओं को झेलने की क्षमता जीव में आनुवंशिक स्तर पर मौजूद होती है। इस तरह यह पहले ही बताया गया है कि इन सिद्धांतों में से कुछ सिद्धांत आनुवंशिक आधार पर केंद्रित हैं।

वृद्धावस्था के लिए किसी भी सिद्धांत के प्रामाणिक होने के लिए, इसे तीन नियमों को संतुष्ट करना होगा—सिद्धांत के अनुसार आवश्यक परिवर्तन जो एक प्रजाति के सभी जीवों में पाए जाते हों; परिवर्तन समय के साथ बढ़ते जाते हों; और परिवर्तनों के कारण शरीर के किसी अंग या तंत्र का ठीक से काम न करना।

आइए, अब इनमें से कुछ सिद्धांतों पर एक नजर डालें।

मृत्यु जीन का सिद्धांत : इस सिद्धांत के अनुसार जीव में वृद्धावस्था एक या एक से अधिक हानिकारक जीनों में आनुवंशिक रूप से प्रोग्रामित होती हैं। ये जीन,

जीवन के अंतिम काल में एक विशेष समय पर सक्रिय हो जाती हैं और उस जीव की शारीरिक क्रियाओं को इस प्रकार परिवर्तित करती हैं कि उसका परिणाम मृत्यु होता है। अलार्म क्लाक की समानता को याद कीजिए जो एक पूर्वनिश्चित समय पर बजना शुरू करती है। यहां अलार्म क्लाक एक जीन की तरह है जो जीवनकाल में एक पूर्वनिश्चित समय पर सक्रिय हो जाती है। यह भी संभव है कि ये जीन जीवन के प्रारंभिक वर्षो में भी सक्रिय होती हों, लेकिन अंतिम काल में रूपांतरित हो जाती हों और इस प्रकार अपना काम आरंभ करती हों। अतः संभवतया रूपांतरित अवस्था में ये जीन वृद्धावस्था से संबंधित क्रियात्मक ह्रास और संरचनात्मक परिवर्तनों के लिए उत्तरदायी हों। यह सिद्धांत बताता है कि मानव जीवनकाल एक वंशानुगत लक्षण है। इस संकल्पना के लिए कुछ साक्ष्य भी हैं।

जुड़वां लोगों के अध्ययन में देखा गया है कि एकल युग्मनज जुड़वों (जहां एक ही अंडा विभाजित होकर दो व्यक्तियों को बनाता है) की मृत्यु की आयु में पर्याप्त साम्य होता है, जबकि यह समानता द्वियुग्मनज जुड़वों (जहां दो अंडे एक साथ विकसित होते हैं) में इतनी स्पष्ट नहीं होती। सर्वेक्षण अध्ययनों में भी यह देखा गया है कि आमतौर से लंबे समय तक जीवित रहने वाले जनकों की संतान का जीवनकाल भी लंबा होता है। इस संकल्पना को उन रिपोर्टो से भी बल मिलता है जिनके अनुसार इक्वेडोर में विल्काबम्बा, पाकिस्तान से हमज़ा और सोवियत जार्जिया के अब्खासिया जैसे विशेष पर्वतीय क्षेत्रों में रहने वाले लोग असाधारण रूप से दीर्घायु होते हैं। इन क्षेत्रों में, कहा जाता है कि लोग 120 वर्षो तक जीते हैं।

अंत में, संवर्धित कोशिकाओं में जराजन्यता को प्रेरित करने में सक्षम कुछ जीनों को पहचान कर जब सामान्य स्वस्थ कोशिकाओं में डाला गया तो इस सिद्धांत पर विश्वास करने वालों के लिए इससे काफी बल मिला था क्योंकि इससे वृद्धावस्था और जराजन्यता को उत्प्रेरित करने के लिए आनुवंशिक स्तर पर सूचना की उपस्थिति सत्यापित हुई। हालांकि, यह भी माना गया है कि जिस ढंग से आनुवंशिक संकेत दृश्य बुढ़ापे में परिवर्तित होते हैं, वे अभी तक समझ से परे हैं।

जीन नियमन का सिद्धांत : यह सिद्धांत लगभग बीस वर्ष पूर्व, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के भारतीय वैज्ञानिक प्रो. एम. एस. कानूनगो ने प्रतिपादित किया था। उन्होंने वृद्धावस्था के दो मुख्य लक्षणों को बताने का प्रयास किया था—एक तो प्रजनन प्रौढ़ता प्राप्त करने के बाद पर्यावरणीय परिवर्तनों के अनुसार अनुकूलन

में धीरे-धीरे आने वाली गिरावट और दूसरा, जीवों का अनुमानित निश्चित जीवन-काल। इस माडल के अनुसार प्रजनन प्रौढ़ता आने के बाद जीनों की अभिव्यक्ति में परिवर्तनों के फलस्वरूप जराजन्यता होती है। जीवन के तीनों कालों—विकास, प्रजनन और जराजन्यता—के दौरान जीनों में क्रमिक सक्रियता और निग्रह होता है। साधारण अर्थों में, विकास के दौरान सक्रिय होने वाली जीन कुछ दूसरी जीनों को सक्रिय कर देती हैं जो जीवन में प्रजनन काल को प्रेरित कर देती हैं। एक बार फिर जो जीन प्रजनन काल में सक्रिय होती हैं कुछ अन्य जीनों को प्रेरित करती हैं, जो जराजन्यता के आरंभ के लिए उत्तरदायी होती हैं।

इस माडल के अनुसार प्रजनन काल, जीवन-काल एक महत्वपूर्ण भाग होता है। अनेक स्तनपाइयों के मामले में यह सत्य है। अन्य सिद्धांतो की तरह यह सिद्धांत भी इस बात पर जोर देता है कि विकास काल और प्रजनन काल की लंबाई, उस जाति के जीवनकाल से संबंधित होती है। इस सिद्धांत की प्रामाणिकता, एक काल के सुस्पष्ट जीन उत्पादों की पहचान पर निर्भर करती है जो अगली अवस्था को आरंभ करते हैं। वैज्ञानिक इसका पता लगा रहे हैं।

कोडोन प्रतिबंध सिद्धांत : अमेरिकी वैज्ञानिक बी. एल. स्ट्रेलर द्वारा प्रतिपादित इस सिद्धांत के अनुसार कोशिका की सबसे आवश्यक क्रिया—प्रोटीन संश्लेषण—में कमी होने के कारण वृद्धावस्था होती है। किसी भी जीव की संरचना और क्रियाओं से संबंधित सभी सूचनाएं आनुवंशिक ब्लूप्रिंट डी एन ए में संग्रहित होती है। प्रोटीन इन क्रियाओं की मध्यस्थता करती है।

प्रोटीन, बीस विभिन्न अमीनो अम्लों के भिन्न-भिन्न संयोजनों की लंबी श्रृंखलाएं होती हैं। प्रत्येक प्रोटीन के लिए अमीनो अम्ल का सही अनुक्रम, डी एन ए पर अंकित होता है। संश्लेषण के दौरान, डी एन ए पर अंकित सूचना, संदेशवाहक अणु पर अनुलिपित हो जाती है जो कि एक राइबोन्यूक्लिक अम्ल होता है। इसे संदेशवाहक आर एन ए (mRNA) कहते हैं। यह एक प्रक्रिया द्वारा होता है जिसे लिप्यंतरण कहते हैं। संदेशधारी डी एन ए की प्रत्येक तीन क्षारों के लिए पूरक क्षार सहित एक mRNA बनता है। इन्हें त्रिककोडोन कहते हैं।

इसके बाद mRNA प्रोटीन में रूपांतरित हो जाता है। यह सूचना स्थानांतरण त्रिक कोडोन की भाषा पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए, यदि mRNA में यूरेसिल-यूरेसिल-यूरेसिल (संक्षेप में UUU) जैसा त्रिक कोडोन है तो यह फिनाइलएलेनीन अमीनो अम्ल के लिए कोड है। आमतौर से शारीरिक प्रोटीन में पाए जाने वाले सभी बीस अमीनो अम्लों के लिए यहां ऐसे कोडोन पाए जाते हैं।

इस प्रकार डी एन ए में मौजूद वास्तविक सूचना या निर्देश, mRNA अणुओं द्वारा प्रोटीनों को भेज दिए जाते हैं। प्रोटीन ऐसे सिपाहियों की तरह होती हैं जो मध्यस्थ अधिकारी mRNA द्वारा मिलने वाले सुप्रीम कमांडर डी एन ए के निर्देशों के अनुसार अत्यंत अनुशासित ढंग से अपनी ड्यूटी करती हैं।

कोडोन प्रतिबंध सिद्धांत इस धारणा पर आधारित है कि जिस परिशुद्धता से mRNA में त्रिक कोडोन, अमीनो अम्लों में रूपांतरित होते हैं वह उम्र के साथ कम होती जाती है। वास्तव में ऐसा ही होता है। यह दिखाने के लिए कुछ प्रायोगिक साक्ष्य मौजूद हैं। यद्यपि इनमें से किसी भी प्रयोग से यह स्पष्ट नहीं होता कि ऐसा क्यों होता है ? यह भी संभव है कि यह दोष वृद्धावस्था के कारण होने की अपेक्षा एक प्रभाव हो। इस प्रकार, मूल प्रश्न अनुत्तरित ही रह जाता है।
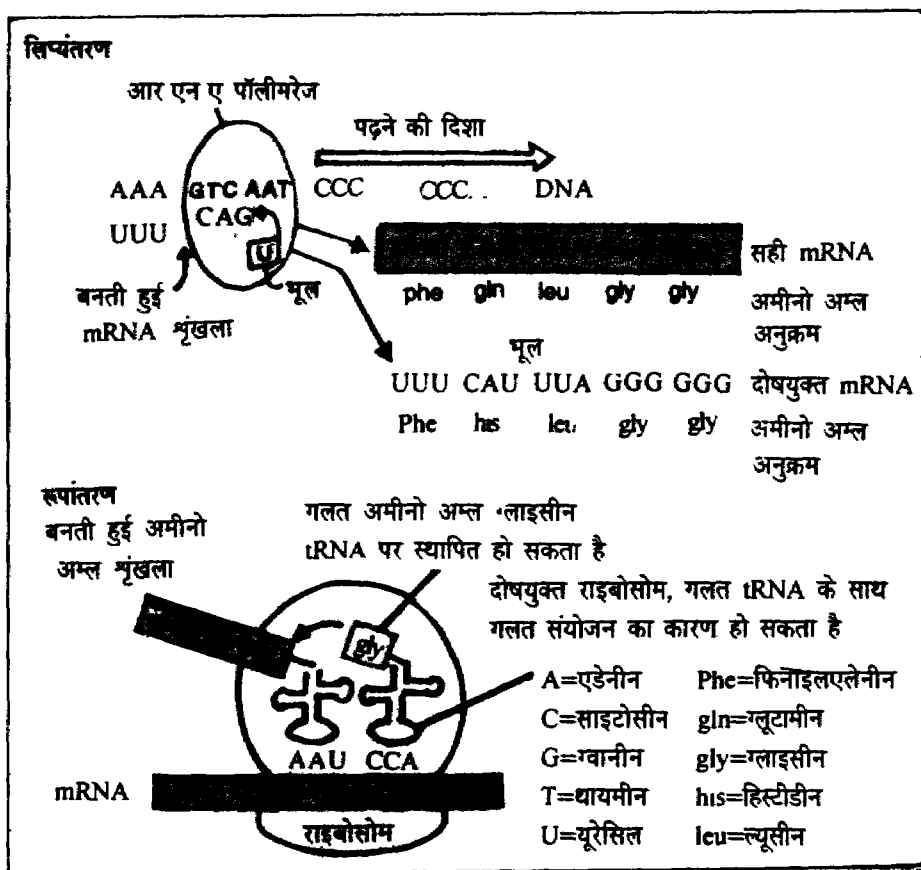
चित्र 12. डी एन ए-आर एन ए प्रोटीन सूचना स्थानांतरण

कायिक उत्परिवर्तन सिद्धांत : यह एक अन्य सिद्धांत है जो आयु के साथ होने वाले परिवर्तनों के मूल कारणों को बताने का प्रयास करता है। इस परिकल्पना का जन्म 1959 में एक वैज्ञानिक, एल. ज़िलार्ड के एक प्रयोग से हुआ। जिलार्ड ने बताया कि विकिरणों (एक्स किरण, गामा किरण, पराबैंगनी प्रकाश) के सम्पर्क में आए चूहे, सामान्य चूहों की अपेक्षा अल्पायु में ही मर गए। बाद में अन्य वैज्ञानिकों ने ये प्रयोग मनुष्यों पर भी किए। किरणित व्यक्तियों में कैंसर की अधिक घटनाएं देखी गयीं जिससे पता लगा कि विकिरण का प्रभाव, आनुवंशिक ब्लूप्रिंट डी एन ए की संरचना को क्षतिग्रस्त करता है। डी एन ए की रचना में इस क्षति या रूपांतरण के कारण, आवश्यक जीनों की क्षति होने लगती है जिसका परिणाम होता है कार्यकारी प्रोटीनों के उत्पादन में कमी, और एक नाजुक स्थिति पर कोशिका की मृत्यु।

हालांकि इस बात के भी कुछ प्रमाण हैं कि कुछ प्रजातियों में एक्स किरण विकिरण, जीवन अवधि को कम करता है, परंतु कठिनाई तब आई जब इन गणनाओं की जीवों की अन्य प्रजातियों में समान रूप से पुष्टि नहीं की जा सकी। डी एन ए क्षति को उत्प्रेरित करने वाले अनेक रसायन (जैसे कि कोल्चीसीन) भी जीवनकाल को प्रभावित करते देखे गए हैं। बाद में किए गए प्रयोगों ने इस सिद्धांत को और कमजोर कर दिया। इन प्रयोगों के दौरान प्रयोगशालाओं में उगाई गई और संवर्धित कोशिकाओं पर विकिरणों का प्रभाव एक जैसा नहीं पाया गया है।

यह भी माना जाता है कि विकिरण जैसे बाहरी कारकों के प्रभाव में आए बिना ही डी एन ए में होने वाले उत्परिवर्तन और रूपांतरण, आयु संबंधी सभी परिवर्तनों को देखते हुए बहुत कम हैं। इसके अतिरिक्त, वृद्धावस्था के प्रारंभिक परिवर्तन, विकिरण प्रभाव के कारण होने वाले परिवर्तनों से भिन्न देखे गए हैं। इसलिए बहुत से लोगों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि यह सिद्धांत की मूल क्रियाविधि की व्याख्या नहीं कर सकता।

डी एन ए क्षति एवं प्रतिपूर्ति सिद्धांत : हम सब एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिए साइकिल, मोटरसाइकल, कार, या अन्य वाहनों का प्रयोग करते हैं। वाहनों के लगातार प्रयोग के कारण उसके भागों को कुछ क्षति पहुंचती है। मशीन को दुर्घटना जैसी बाहरी और अनचाही घटनाओं से भी नुकसान पहुंच सकता है। धातु के बने अर या तार टूट सकते हैं। यदि दुर्घटना बहुत भीषण हो तो कार को बहुत ज्यादा क्षति पहुंच सकती है। इस तरह की टूट-फूट कोशिकाओं में भी होती है। परंतु दोनों में एक अंतर है। वाहन निर्जीव वस्तुएं हैं। उनके अंदर क्षति का ध्यान रखने के लिए कोई भीतरी क्रियाविधि मौजूद नहीं है। हमें उन्हें मिस्त्री के पास ले

जाकर उनकी मरम्मत करानी पड़ती है। परंतु जीवित कोशिकाओं में विकास की लंबी प्रक्रिया के दौरान क्षति की प्रतिपूर्ति करने के लिए अनेक ऐसी क्रियाएं विकसित हो गई हैं जो उनके प्रधान सूचनात्मक अणु डी एन ए में जमा होती हैं। अनुसंधानों से पता लगा है कि आमतौर से शरीर की डी एन ए प्रतिपूर्ति क्रिया, डी एन ए की संभावित क्षति की देखभाल के लिए पूरी तरह उपयुक्त होती है।

वास्तव में मरम्मत की क्रियाएं इतनी असाधारण परिशुद्धता से काम करती हैं कि डी एन ए अणु, विकिरण जैसे बाहरी बलों के घातक आक्रमण या शरीर के अंदर बनने वाले रसायनों, जो डी एन ए को नुकसान पहुंचा सकते हैं, के बावजूद कुल मिलाकर, अपनी संरचनात्मक और क्रियात्मक संपूर्णता को बनाए रखने में सक्षम होते हैं।

डी एन ए क्षति एवं प्रतिपूर्ति सिद्धांत के अनुसार क्षतिग्रस्त डी एन ए की मरम्मत क्षमता, विभिन्न जैविक तंत्रों में आयु के साथ कम होती जाती है। परिणामस्वरूप, क्षतिग्रस्त या परिवर्तित डी एन ए कोशिकाओं में जमा होता रहता है और लिप्यंतरण तथा रूपांतरण जैसी अनिवार्य क्रियाएं, अनेक त्रुटियों सहित, अनोखे ढंग से होती रहती है, और दुर्घटनावश कोशिका मर जाती है। यह सिद्धांत यह भी बताता है कि क्षतिग्रस्त डी एन ए का जन्म होना या डी एन ए प्रतिपूर्ति क्षमता में कमी, संयोगिक प्रक्रिया नहीं है, बल्कि आनुवंशिक रूप से प्रोग्रामित और नियंत्रित प्रक्रिया है।

यदि इस सिद्धांत को सत्य मान लिया जाए तो प्रयोगों से तीन तथ्यों के लिए साक्ष्य मिलने चाहिए : किसी भी जीव में प्रजनन प्रौढ़ता प्राप्त करने के बाद आयु बढ़ने के साथ-साथ कोशिकाओं में अधिक से अधिक क्षतिग्रस्त डी एन ए जमा हो जाने चाहिए। डी एन ए प्रतिपूर्ति क्षमता का आयु बढ़ने के साथ ह्रास होना चाहिए। किसी भी जीव के आयुकाल का उसकी कोशिका डी एन ए प्रतिपूर्ति क्षमता से सीधा संबंध होना चाहिए।

वास्तव में, इन तथ्यों का पता लगाने के लिए विस्तृत अनुसंधान किए गए हैं। वैसे, अनुसंधानकर्ता इस बात से सहमत हैं कि क्षतिग्रस्त/रूपांतरित डी एन ए अधिक आयु के जीवों में पाया जाता है। यह देखा गया है कि बड़ी आयु के जीवों के डी एन ए की रचना में विवर अधिक होते हैं। यह स्पष्ट नहीं है कि ऐसा शरीर में डी एन ए क्षति की बढ़ती घटनाओं के कारण होता है या डी एन ए प्रतिपूर्ति क्षमता के आनुवंशिक प्रोग्राम में कमी के कारण, या दोनों के ही कारण।

डी एन ए प्रतिपूर्ति क्षमता में कमी आयु पर आधारित होती है—इससे संबंधित परिणाम विरोधात्मक हैं। कुछ प्रयोगों में यह कम होती पाई गई है जबकि

कुछ दूसरे प्रयोगों में आयु का कोई प्रभाव नहीं देखा गया। अब ऐसा लगता है कि डी एन ए प्रतिपूर्ति क्षमता की जांच के लिए और अधिक परिष्कृत तकनीकों की आवश्यकता है, और वैज्ञानिक इसी में व्यस्त हैं।

दूसरी ओर, कुछ अनुसंधानकर्ताओं ने यह भी देखा है कि जीवों के आयुकाल का सीधा संबंध उनकी डी एन ए प्रतिपूर्ति क्षमता से होता है। अर्थात् लंबे समय तक जीवित रहने वाली प्रजातियों जैसे कि मनुष्यों, हाथियों, और गायों में डी एन ए प्रतिपूर्ति क्षमता कम समय तक जीवित रहने वाले जीवों (जैसे चूहे आदि) की अपेक्षा अधिक होती है। यह स्पष्ट संकेत है कि विकास के दौरान, कुछ प्रजातियों ने अपने आनुवंशिक तंत्र को सही रखने के लिए अधिक क्षमता प्राप्त कर ली और इस प्रकार अन्य प्रजातियों की अपेक्षा अधिक समय तक जीवित रहती हैं। इस दृष्टिकोण को सुदृढ़ करने का यह एक और पक्ष है कि जीवों का आयुकाल आनुवंशिक रूप से प्रोग्रामित होता है।
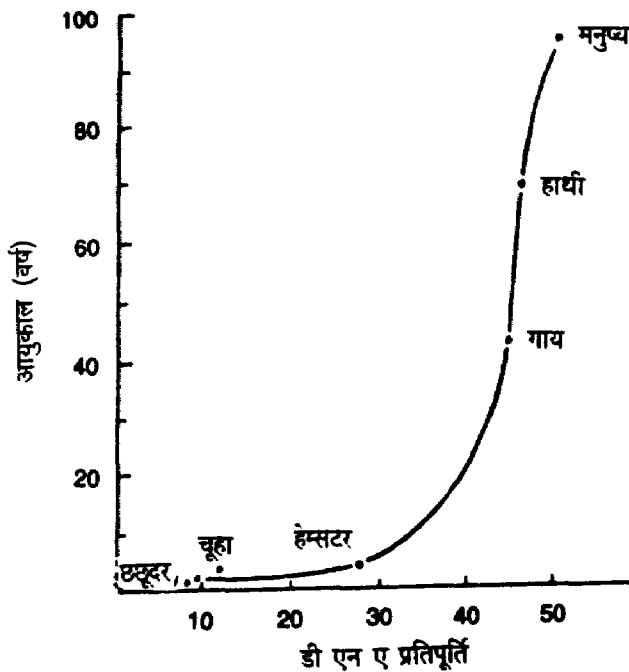
विभिन्न स्तनपाइयों में परावैंगनी विकिरण के प्रभाव से आयुकाल और थायमीन डायमर विस्थापन द्वारा डी एन ए प्रतिपूर्ति क्षमता के बीच संबंध। [साइनेक्स एफ. एम; फिन्च, सी. ई. एवं हेफ्लिक, एल. द्वारा संपादित पुस्तक *हेंडबुक आफ द बायोलाजी आफ एजिंग;* वान नास्ट्रैंड रेनहोल्ड कं., न्यूयार्क, 1977 में]

चित्र 13. विभिन्न आयुकाल वाले जीवों में डी एन ए प्रतिपूर्ति क्षमता

कुछ आलोचकों के मत के अनुरूप यह संभव है कि दीर्घजीवी जीवों (मनुष्य सहित) ने अल्पजीवी जीवों की अपेक्षा डी एन ए क्षति को सहने की अधिक क्षमता विकसित कर ली हो। इसके अलावा, कुछ उच्चवर्गीय दीर्घजीवी जीवों के आनुवंशिक तंत्र में एक ही जीन की अनेक अनुकृतियां होती हैं। इस प्रकार, यदि कुछ जीन प्रभावित होती भी हैं तो कुछ बिना क्षतिग्रस्त अच्छी जीन उसके काम को करने के लिए मौजूद रहती हैं।

इन तर्कों का उत्तर इस सिद्धांत के समर्थकों ने दिया है, जिनका कहना है कि जीन की अनेक अनुकृतियां होना आनुवंशिकी है, कि यह क्षमता विकास के दौरान प्राप्त की गई है क्योंकि वे मूल संकल्पना से दूर नहीं हैं, कि जो जीनों की संपूर्णता बनाए रखने के लिए अनुकूलन कर लेते हैं वे लंबे समय तक जीते हैं। डी एन ए क्षति और प्रतिपूर्ति सिद्धांत, वृद्धावस्था से संबंधित अनेक सिद्धांतों में सबसे अधिक स्वीकृत सिद्धांत है क्योंकि वृद्धावस्था के दौरान होने वाले परिवर्तनों और विभिन्न प्रजातियों में जीवनकाल की विभिन्नता की इस सिद्धांत द्वारा आनुवंशिक स्तर पर व्याख्या की जा सकती है। एक तरह से यह सिद्धांत, वृद्धावस्था के अन्य सभी सिद्धांतों में व्याप्त है।

हम बूढ़े क्यों होते हैं, इसकी व्याख्या करने के लिए बहुत से अन्य सिद्धांत भी हैं। ये सभी इस पूर्वानुमान पर आधारित हैं कि शरीर में कुछ ऐसी स्वतः या संयोगिक घटनाएं होती हैं जो काशिकाओं में डी एन ए क्षति के लिए जिम्मेदार होती हैं या शरीर के महत्वपूर्ण तंत्रों में घातक परिवर्तन का कारण होती हैं। चूंकि अधिकांश अनुसंधानों में पहले ही देखा गया है कि वृद्धावस्था की प्रक्रिया का आधार आनुवंशिक होता है, अतः स्वतः होने वाली घटनाओं पर आधारित ये सिद्धांत विश्वसनीय नहीं है। इन्हें केवल तभी प्रामाणिकता मिलेगी जब इन स्वतः होने वाली क्रियाओं के पीछे कोई आनुवंशिक नियंत्रण हों। ऐसे कुछ सिद्धांत हैं टूट-फूट सिद्धांत, अपकृत्य-निर्वहण सिद्धांत, मुक्त मूलक सिद्धांत और स्वप्रतिरक्षी सिद्धांत।

जैसा कि नामों से ही पता चलता है, इन सिद्धांतों का अनुमान है कि सामान्य टूट-फूट, प्रोटीन संश्लेषण जैसी महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं में त्रुटियों का संचयन, अत्यंत सक्रिय मुक्त मूलक वर्गों द्वारा कोशिकाओं और डी एन ए का क्षतिग्रस्त होना, और शरीर में प्रतिरक्षी तंत्र को नष्ट होना वृद्धावस्था के कारण हैं। जैसा कि देखा गया है, ये सभी संकल्पनाएं बताती हैं कि आयु के साथ शरीर में कुछ परितर्वन होते हैं, लेकिन ये सभी यह नहीं बतातीं कि वृद्धावस्था एक प्रोग्रामित और योजनाबद्ध ढंग से क्यों आती है जो जीवनकाल के दौरान एक निश्चित समय पर आरंभ होती है।

हालांकि, जब इन सिद्धांतों को डी एन ए क्षति और प्रतिपूर्ति सिद्धांत या मृत जीन सिद्धांत के साथ जोड़ा जाता है तो ऐसा लगता है कि इनसे वृद्धावस्था में देखे गए कुछ परिवर्तनों की व्याख्या की जा सकती है। इस प्रकार, आज जिन सिद्धांतों का आधार आनुवंशिक है—जैसे जीन नियमन सिद्धांत, जराजन्यता और मृत्यु के लिए जिम्मेदार जीन डी एन ए क्षति और प्रतिपूर्ति सिद्धांत—उनका अध्ययन किया जा रहा है।

चित्र 14.

5
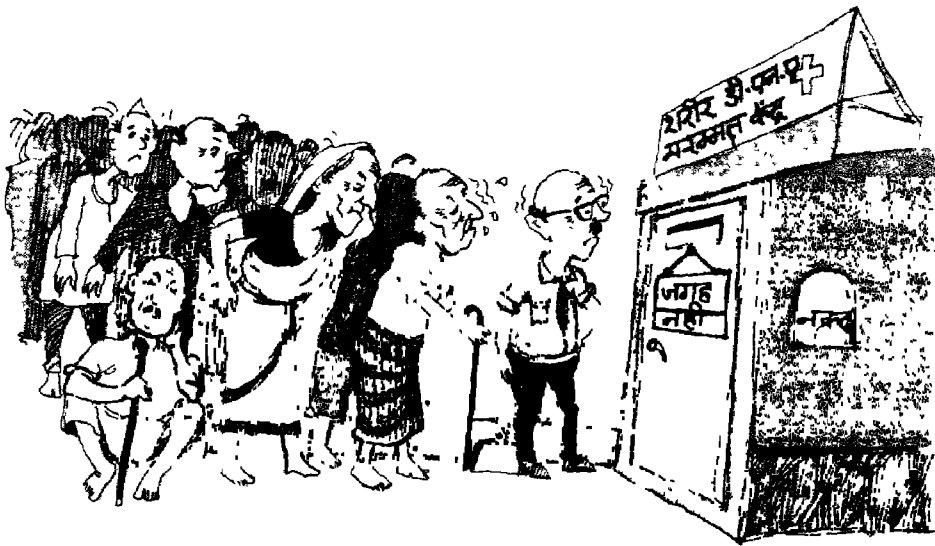
अमरत्व की तलाश

मुझे कभी नहीं लगा कि मैं जीवित रहूंगा
कि मैं जीवित रहने के उपाए करूं
और पच्चानवां वर्ष पूरा कर पाऊं
लेकिन छोड़ो यह सब, मैंने पाया कि
मैंने स्कोर बढ़ा लिया है
एक वर्ष और
वाह !
और अब तुम जानते हो, मुझे ऐसा लगता है
कि एक पूरी शताब्दी भी
वास्तविक रूप से असंभव नहीं है।

–फ्रैंक बक्ससटन

हिंदू धर्म के एक प्राचीन और पवित्र धर्मग्रंथ, भगवद्गीता, में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है 'जतास्या ही ध्रुवो मृत्युर' (जो जन्मा है उसकी मृत्यु निश्चित है)। प्रत्येक जीव को मरना है। जीवाणुओं जैसे कुछ सूक्षम जीवों को छोड़कर जो साधारण विभाजन द्वारा प्रवर्धित होते हैं, हम इंसानों सहित दूसरे सभी जीवों को बूढ़ा होना है और उसके बाद मृत्यु का सामना करना है।

जन्म से मृत्यु तक, परिपक्वता, प्रजनन और बूढ़ा होने की घटनाएं एक व्यवस्थित ढंग से होती हैं और आनुवंशिक रूप से नियंत्रित होती हैं। प्रत्येक जीव, प्रत्येक कोशिका के केंद्रक की गहराई में छिपी सूचनाओं के साथ जन्म लेता है। यदि घटनाओं का पूरा चक्र ही इतना अपरिहार्य है तो बुढ़ापे का अध्ययन क्यों ?

वैज्ञानिकों ने तीन मुख्य उद्देश्यों से बुढ़ापे पर अनुसंधान शुरू किया है–आयु

के साथ होने वाले परिवर्तनों के पीछे की सूक्ष्म विधियों को समझने के लिए, यह समझने के लिए कि क्या इन परिवर्तनों को किसी तरह नियंत्रित या संचालित किया जा सकता है जिससे दीर्घ आयु प्राप्त की जा सके, और यह देखने के लिए कि क्या मृत्यु से छुटकारा पाया जा सकता है ? यह स्पष्ट है कि बुढ़ापे के साथ होने वाले सभी बाहरी और कोशिकाय परिवर्तनों का कारण जीनों के स्तर पर निहित होता है। जीनों में ही आयु-आधारित परिवर्तनों और दीर्घ आयु से संबंधित सूचनाएं होती हैं। हाल के वर्षों में, वैज्ञानिकों ने इस बात के स्पष्ट प्रमाण दिए हैं कि बुढ़ापा वास्तव में एक आनुवंशिक रूप से नियंत्रित प्रक्रिया है। प्रथम, X-क्रोमोसोम पर अन्यथा निष्क्रिय रहने वाली एक जीन, बूढ़े लोगों में 'सक्रिय' हो जाती है। इसका स्पष्ट अर्थ है कि यह जीन जर्जरता आरंभ के साथ सक्रिय हो जाती है। केवल तीन वर्ष पहले मानव के क्रोमोसाम-1 पर, जर्जरता के लिए उत्तरदायी जीन (जीनों) की पहचान की गयी। जब वैज्ञानिकों ने मानव कोशिकाओं के क्रोमोसाम-1 को एक सेल-लाइन में स्थानांतरित किया जिन्हें अविनाशी बनाया गया था (ये कोशिकाएं पोषक आहार उपलब्ध रहने तक विभाजित होती रहीं), तो अविनाशी कोशिकाओं ने बुढ़ापे के लक्षण दिखाने आरंभ कर दिए। यह एक बहुत महत्वपूर्ण खोज है जो हमें बताती है कि हमारे क्रोमोसोम-1 में एक या एक से अधिक ऐसी जीन होती हैं जो कोशिका के शेष क्रोमोसामों और जीनों की क्रिया को रोकने और बुढ़ापा आरंभ करने का आदेश देने की क्षमता रखती हैं।

यह स्पष्ट नहीं है कि क्रोमोसोम-1 और X-क्रोमोसोम पर ये जीन किस प्रकार सक्रिय हो जाती हैं। वह क्या संकेत है जो उन्हें सक्रिय बनाता है। यदि यह जीन उत्परिवर्तन की दुर्घटना द्वारा, किसी के जीवनकाल में गलत समय पर सक्रिय हो जाएं तो क्या होगा ?

वास्तव में, प्रकृति ने स्वयं इन प्रश्नों के कुछ उत्तर दिए हैं। मुनष्यों में कम से कम चार आनुवंशिक बीमारियां होती हैं जिन्हें समयपूर्व बुढ़ापे के लक्षणों से पहचाना जाता है। इन रोगियों में समय बुढ़ापे के लक्षण दिखाई देते हैं जबकि कालक्रमानुसार वे वास्तव में नौजवान होते हैं। ये लोग, जैसा कि पूर्वानुमान लगाया जा सकता है, जल्दी ही मर जाते हैं। ये आनुवंशिक सिंड्रोम हैं डाउन्स सिंड्रोम, प्रोजेरिया, वर्नर्स सिंड्रोम और कोकेन सिंड्रोम। एक सिंड्रोम से दूसरे सिंड्रोम के लक्षण अलग होते हैं। इनके जो समान लक्षण वे हैं—आयुपूर्व बुढ़ापा, मानसिक दुर्बलता, और कोशिकीय स्तर पर क्षतिग्रस्त या परिवर्तित डी एन ए, संभवतया दोषपूर्ण डी एन ए—प्रतिपूर्ति क्षमता के कारण।

वर्ष 1866 में डाउन नामक वैज्ञानिक द्वारा वर्णित डाउन्स सिंड्रोम एक

आनुवंशिक बीमारी है। जन्म लेने वाले प्रत्येक 660 बच्चों में से एक में यह बीमारी वंशानुगत पाई जाती है। इसका सबसे अधिक अध्ययन किया जा चुका है और इसके अधिकांश लक्षण लोगों की सामान्य उम्र में ही दिखाई देते हैं। यह रोग त्रिक क्रोमोसोम-21 की उपस्थिति के कारण होता है। आमतौर पर हम सब में क्रोमोसोम-21 का एक जोड़ा होता है, लेकिन इन रोगियों में एक तीसरा क्रोमोसोम-21 भी मौजूद होता है। यह अवस्था क्रोमोसोम-21 की ट्राइसोमी कहलाती है। प्रभावित व्यक्ति 'मंगोलीय चेहरे' के कारण आसानी से पहचाना जाता है।

प्रोजेरिया, जिसे हकिन्सन-गिल्फोर्ड सिंड्रोम भी कहते हैं, का भी सबसे पहले 1866 में पता चला। यह, हालांकि आरंभिक शैशवकाल में बहुत कम पाया जाने वाला रोग है, इसे बुढ़ापे के सामान्य लक्षणों जैसे गंजापन, त्वचा का पतला होना, सिर की रक्त वाहिनियों का उभरना और संवहन रोग आदि से पहचाना जाता है। इससे प्रभावित बच्चे 'नन्हे बूढ़े' जैसे दिखाई देते हैं। वे मुश्किल से 15 से 18 वर्ष की आयु तक जीवित रहते हैं। इन वर्षों में ऐसे बहुत से रोगी देखे गए हैं। इस आनुवंशिक रोग का सबसे प्रमुख लक्षण है वृद्धि का बिलकुल रुक जाना, जिसे 6 से 12 माह की छोटी आयु में ही देखा जा सकता है। रोगी लैंगिक परिपक्वता तक कभी नहीं पहुंचते यद्यपि कुछ रोगियों की बुद्धि सामान्य पायी गयी। इन रोगियों की कोशिकाओं के लिए हेफ्लिक सीमा (प्रयोगशाला में कोशिकाओं के विभाजित होने की अधिकतम संख्या) केवल दस के आसपास होती है जबकि सामान्य अवस्था में यह संख्या पचास होती है। एक प्रोजेरिया रोगी (प्लेट 5) अपना पूरा जीवन एक विलक्षण गति से व्यतीत करता है। मृत्यु आमतौर से हृदयवाहिनियों के रोग के कारण होती है।

वर्नर्स सिंड्रोम बहुत कुछ प्रोजेरिया के समान होता है, लेकिन इसके रोगी में जिस गति से बुढ़ापे के लक्षण विकसित होते हैं, वह बहुत कम होती है। ये रोगी तीस या चालीस वर्ष तक जीवित रहते हैं (प्लेट 4)।

कोकेन सिंड्रोम, त्वरित बुढ़ापे के लक्षणों वाला हाल में ही पहचाना गया आनुवंशिक रोग है। कम वृद्धि, बहुत कम वसा, बूढ़ा दिखाई देना, अच्छी बौद्धिकता की कमी—इसके कुछ लक्षण हैं (प्लेट 2)। जीवनकाल छोटा होता है।

इन आनुवंशिक सिंड्रोमों की उपस्थिति से यह तथ्य सामने आया कि बुढ़ापा एक आनुवंशिक क्रिया है। जब बुढ़ापे से संबंधित एक जीन या बहुत सी जीनों में कुछ गड़बड़ी होती है तो इसका परिणाम होता है ऐसे सिंड्रोम। बुढ़ापे को मात्र एक या दो जीनों से नहीं, बल्कि बहुत सी जीनों द्वारा नियंत्रित किया जाता है, जैसे कि स्वयं बुढ़ापे को बहुत से लक्षणों और कमियों से पहचाना जाता है। इन लक्षणों

की अभिव्यक्ति से संबंधित जीनों की संख्या भी बहुत हो सकती है। इस प्रकार, जहां जर्जरता और बुढ़ापा मृत्यु की ओर ले जाते हैं, जर्जरता के बहुत से लक्षण, बहुत से कारकों द्वारा प्रकट किए जा सकते हैं।

ऊपर दी गई चर्चा से एक रोचक प्रश्न उठता है। यदि कुछ उत्परिवर्तनों का परिणाम ऐसी बीमारी हो सकती है जो समयपूर्व बुढ़ापा ले आती है तो ऐसा कैसे हो सकता है कि प्रकृति में कुछ ऐसे उत्परिवर्तन न होते हों जिससे कभी बुढ़ापा आता ही न हो ? सही दिशा में किसी उत्परिवर्तन, जैसे जर्जरता उत्पन्न करने वाली जीन या जीनों में परिवर्तन, से एक अमर व्यक्ति या जीव का जन्म होना चाहिए, लेकिन ऐसा होता नहीं है।

यद्यपि कुछ ऐसी सूचनाएं भी प्राप्त हुई हैं जिससे विश्व के कुछ भागों में असामान्य, अति दीर्घ आयु का दावा किया गया है। लेकिन दावों को कुछ प्रतिबंधों के साथ लिया जाना चाहिए। प्रथम, उनकी दीर्घ आयु, मनुष्य की अधिकतम आयु सीमा के भीतर ही है। दूसरे, इसकी कल्पना भी करना कठिन है कि ऐसे उत्परिवर्तन विश्व के केवल कुछ भागों में कैसे हो सकते हैं, अन्य भागों में नहीं।

दूसरी ओर, मनुष्य के अनश्वर न होने के लिए एक वैज्ञानिक स्पष्टीकरण दिया जा सकता है। चूंकि बूढ़ा होने की प्रक्रिया का नियंत्रण कई जीनों द्वारा होता है, अतः अनश्वर मनुष्य उत्पन्न करने के लिए, एक ही समय में इन सभी जीनों में इस दिशा में उत्परिवर्तन होने चाहिए। केवल एक संभावना कारक के कारण विकास के दौरान मिलने वाली यह एक अत्यंत असामान्य घटना है।

हालांकि विकास या बुढ़ापे से संबंधित किसी भी जीन में विपरीत दिशा में उत्परिवर्तन मिल सकते हैं और इससे बुढ़ापे की प्रक्रिया तेजं हो जाती है। उदाहरण के लिए बुढ़ापे के एक लक्षण के रूप में हम बालों का सफेद होना ले सकते हैं। हम यह भी मान सकते हैं कि बालों को काला रखने के लिए एक विशेष जीन होती है। यदि कोई व्यक्ति इस जीन को परिवर्तित या उत्परिवर्तित रूप में उत्तराधिकार में पाता है, तो उस व्यक्ति के बाल बहुत जल्दी सफेद हो जाएंगे, चाहे उस समय वह बीस वर्ष का ही हो। इस प्रकार इसे 'समयपूर्व बुढ़ापा' कहा जा सकता है। बुढ़ापे के एक लक्षण के रूप में इस उदाहरण में बालों का सफेद होना है। जब बुढ़ापे के कार्यक्रम से संबंधित बहुत सी जीन, एक उत्परिवर्तित रूप में वंशानुक्रम में मिलें तो क्या हो ? यह एक बहुत कम घटने वाली घटना है लेकिन फिर भी संभव है। तब संबंधित व्यक्ति के जीवन में बुढ़ापे के लक्षण बहुत जल्दी दिखने लगेगें और वह उसकी असमय मृत्यु होगी। ऊपर बताए गए आनुवंशिक सिंड्रोम–डाउन्स सिंड्रोम, प्रोजेरिया और वर्नर्स सिंड्रोम–ऐसी ही श्रेणी में आते हैं।

बुढ़ापे पर अनुसंधान का उद्देश्य, बुढ़ापे की दर को नियंत्रित करने की संभावना की जांच करना है। यदि यह सूचना जीनों में रहती है कि कैसे और किस गति से कोई बूढ़ा होता है, तो आण्विक जैविकी और आनुवंशिक अभियांत्रिकी के क्षेत्र में आज उपलब्ध तकनीकों द्वारा क्या बुढ़ापे की प्रक्रिया पर नियंत्रण पाना संभव नहीं होना चाहिए ?

वास्तव में, इस दिशा में पहले से ही प्रयोग आरंभ किए जा चुके हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका, सान फ्रांसिस्को में डा. क्लीवर का दल और नीदरलैंड में डा. होईमेकर और उनके साथी इस बात की जांच कर रहे हैं कि क्या डी एन ए प्रतिपूर्ति से संबंधित जीनों को डी एन ए प्रतिपूर्ति प्रवीण कोशिकाओं से डी एन ए प्रतिपूर्ति विहीन कोशिकाओं में स्थानांतरित किया जा सकता है। डी एन ए प्रतिपूर्ति विहीन कोशिकाएं, जीरोडर्मा पिगमैन्टोसन (XP) नामक आनुवंशिक रोग से ग्रस्त रोगियों की त्वचा से प्राप्त की जा सकती हैं। ये रोगी सूर्य के प्रकाश के प्रति अत्यंत संवेदी होते हैं। इनके अंदर डी एन ए प्रतिपूर्ति से संबंधित आनुवंशिक दोष होता है और ये अपनी त्वचा कोशिकाओं में सूर्य के प्रकाश के कारण होने वाली डी एन ए क्षति की प्रतिपूर्ति नहीं कर सकते। XP-पीड़ित रोगियों में समयपूर्व बुढ़ापे के भी कुछ लक्षण दिखाई देते हैं जिन्हें ए, बी, सी, डी आदि अनेक वर्गों में बांटा जा सकता हैं। प्रत्येक वर्ग में दोषी जीन अलग पायी गई—परंतु दोष सभी की डी एन ए प्रतिपूर्ति में ही था।

वैज्ञानिकों द्वारा प्राप्त परिणाम है—एक XP-वर्ग के रोगियों से प्राप्त कोशिकाओं की दूसरे XP-वर्ग के रोगियों से प्राप्त कोशिकाओं के साथ संयोजन के रूप में व्याख्या की जा सकती है। इस संयोजन से बनने वाली संकर कोशिकाएं डी एन ए प्रतिपूर्ति में दक्ष पाई गयी हैं और वे सामान्य कोशिकाओं की तरह काम करने लगी हैं। इसका अर्थ है कि स्वयं डी एन ए प्रतिपूर्ति में अक्षम दो विभिन्न वर्गो की XP कोशिकाओं ने एक दूसरे की कमी को पूरा किया, जिसमें संतति कोशिकाएं सामान्य हो गयीं।

यह कुछ ऐसा ही है जैसे दो व्यक्तियों के सामने प्लेटों में खाना रखा हो। उनमें से एक में चावल के अतिरिक्त सब कुछ हो; दूसरी में दही के अलावा सब कुछ हो। पहला दूसरे को कुछ दही दे दे, और दूसरा पहले को कुछ चावल दे दे। अब दोनों के पास पूरा खाना है।

कुछ मानव डी एन ए प्रतिपूर्ति कोशिकाओं की पहचान की जा चुकी है और उन्हें जीवाणु जैसे निम्न जीवों में पहले से ही ज्ञान जीनों के समान पाया गया। निम्न जीवों की जीनों को, डी एन ए प्रतिपूर्ति विहीन मानव कोशिकाओं में स्थानांतरण

के प्रयास जारी हैं। इन प्रयासों में वैज्ञानिकों को कुछ सफलता मिल चुकी है। नीदरलैंड के वैज्ञानिकों ने इस उद्देश्य के लिए सूक्ष्म-इंजेक्शन तकनीक का प्रयोग किया है। इस तकनीक में, अत्यंत सूक्ष्म सूई से एक कोशिका में जीनों का इंजेक्शन दिया जाता है। इस दिशा में बहुत तेजी से अनुसंधान किए जा रहे हैं। इन सभी प्रयोगों में यह मान लिया गया है कि डी एन ए प्रतिपूर्ति क्षमता, दीर्घ आयु के लिए आवश्यक कारकों में से एक है।

एक प्रश्न जो वैज्ञानिकों के दिमाग में उठता है, वह है कि क्या हम हिंदू महाकाव्यों में वर्णित देवताओं के समान अमरत्व प्राप्त कर सकते हैं। सैद्धांतिक रूप में, हम पहले ही देख चुके हैं कि वृद्धावस्था सभी जैविक तंत्रों का अनिवार्य गुण नहीं है।

उदाहरण के लिए, एक जनन कोशिका (शुक्राणु या अंडाणु) को अनश्वर कहा जा सकता है। जब ये दोनों युग्मनज बनाने के लिए आपस में युग्मित होती हैं तो युग्मनज एक ऐसे संपूर्ण जीव में विकसित होता है जो पुनः जनन कोशिकाओं के द्वारा प्रजनित होने में सक्षम होता है। इसी तरह से, जीवाणु और प्रोटाजोआ जैसे अनेक सूक्ष्मजीव तब तक विभाजित होते रहते हैं जब तक पोषक आहार उपलब्ध रहता है। एक कैंसरग्रस्त कोशिका भी अनश्वर होती है; यह भी पड़ोसी कोशिकाओं से आहार लेकर विभाजित होती रहती है। वास्तव में, प्रयोगशालाओं में अनेक कोशिकाक्रमों को संवर्धित किया गया है और आज उपलब्ध कुछ रसायनों के प्रभाव से उन्हें अनश्वर कोशिकाओं में बदला गया है।

इन सबका अर्थ है कि अमरत्व (वांछित या अवांछित) असंभव नहीं है। आवश्यक यह है कि अमरतव, कैंसर जैसे किसी रोग के रूप में न प्राप्त किया गया हो, बल्कि एक प्राकृतिक और सामान्य क्रिया के रूप में हो। कोशिकाएं सामान्य और जीवित रहनी चाहिए, लेकिन कैंसरग्रस्त कोशिकाओं के रूप में नहीं। अमरत्व, बुढ़ापे और कैंसर के बीच कहीं तो अदृश्य दिशा परिवर्तन है।

हालांकि, वृद्धावस्था से संबंधित अनुसंधानों का उद्देश्य अमरत्व प्राप्त करना नहीं है—कम से कम अभी यह मूल प्रश्न नहीं है। अनेक जराविज्ञानियों के अनुसार जो प्राप्त करना आवश्यक है वह है 'स्वस्थ' बुढ़ापा। ऐसी प्रथा है कि वृद्धावस्था को जीवन के एक ऐसे अनचाहे अंश के रूप में देखा जाता है जिसमें अवसाद, कुंठा, साहचर्य की कमी, अस्वस्थता और अवांछनीयता प्रमुख लक्षण हैं। यदि वृद्धावस्था की प्रक्रिया का ज्ञान, वृद्धावस्था से जुड़ी बीमारियों और खराब स्वास्थ्य के निराकरण का संकेत दें तो यह मानवोचित उद्देश्य को पूरा करेगा। तब लोग स्वस्थ और प्रसन्नचित्त तरीके से 'बूढ़े' हो सकते हैं। वास्तव में, अंत में मृत्यु तो होगी, लेकिन

इससे पहले लंबी बीमारी और असहाय जीवन जीना आवश्यक नहीं होगा। जीवन का आरंभ, मध्यकाल और अंत होता है। फिर हमेशा अंत ही कष्टपूर्ण और भयावह क्यों हो ?

कुछ लोगों ने अमरत्व के प्रयत्न को बिलकुल ही नहीं छोड़ दिया है। अमरत्व का प्रलोभन अत्यंत लुभावना है। अमेरिका जैसे देशों में बहुत से लोग इस आशा में कि एक दिन जैव प्रौद्योगिकीय चमत्कार उन्हें पुनः जीवन देने में सक्षम होगा, मृत्यु के बाद अपने शरीर को हिमीभूत कराने के लिए काफी धन खर्च करते हैं। एक विज्ञप्ति के अनुसार कुछ लोग मृत्यु के पहले ही इस आशा में स्वयं को हिमीभूत कराने के लिए गंभीरता से सोच रहे हैं, कि कभी भविष्य में वे पुनर्जीवित हो सकेंगे जब उनका शरीर पुनः यौवन पा सकेगा।

वास्तव में मानव शरीरों को हिमशीतित करने का विचार लगभग तीस वर्ष पूर्व प्रकाशित आर. सी. डब्ल्यू. इटिन्जर की पुस्तक 'द प्रोस्पेक्ट आफ इम्मार्टेलिटी' से लोकप्रिय हुआ। अमेरिका की क्रायोनिक्स सोसायटी आफ केलिफोर्निया मृत शरीरों को हिमीभूत करने का काम कर रही है।

चित्र 15.

6

जीवन का पतझड़

मेरे साथ बूढ़े हो जाओ
अभी सबसे श्रेष्ठ होना बाकी है
जीवन का अंत,
जिसके लिए प्रारंभ बना था।

–राबर्ट ब्राउनिंग

यह देखा गया है कि बूढ़े होने की प्रक्रिया की प्रकृति बहुआयामी है। यह शारीरिक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक कारकों की जटिल पारस्परिक क्रिया का परिणाम है। हालांकि, हमारे लिए यह समझना जरूरी है कि मनुष्यों में दीर्घायु के वंशानुक्रम का पता लगाना अत्यंत कठिन है क्योंकि जीवनकाल सामाजिक, आर्थिक और अन्य पर्यावरणी कारकों से भी प्रभावित होता है। प्रौढ़ता की सीमाओं का प्रतिकार केवल सामाजिक परंपराओं में परिवर्तन द्वारा किया जा सकता है जिससे वृद्धों की दशा को बेहतर बनाने के लिए कुछ किया जा सके। मानव अंगों की अनुकूलनशीलता से, वृद्धावस्था की अनेक शारीरिक क्रियाओं की क्षति को पूरा कर पाना संभव हो गया है। अनेक अध्ययनों से पता लगा है कि जीवनकाल काफी हद तक परिवार में चलने वाले हृदय रोग और कैंसर जैसी प्रमुख बीमारियों के प्रति सुग्राहकता या आनुवंशिकता से प्रभावित होता है। इसी तरह इस बात के भी पर्याप्त प्रमाण हैं कि एक युग्मनज (आनुवंशिक रूप से समान) जुड़वों का जीवनकाल समान-लिंग द्वियुग्मनज (भ्रातृवत्) जुडवों के समान होता है।

दुनिया भर में आम चिकित्सा सेवाओं में सुधार और शिशु मृत्युदर में कमी के कारण लोगों की आयु में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। अमेरिका और यूरोप जैसे विकसित देशों में भारत जैसे विकासशील देशों की अपेक्षा सुधार अधिक स्पष्ट हैं।

फिर भी, एक भारतीय की औसत आयु 59 वर्ष तक जा पहुंची है जो चालीस वर्ष पहले लगभग 35 वर्ष थी। ऐसे संकेत मिले हैं कि परिवार नियोजन के साथ चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में हुई प्रगति और अधिक स्वास्थ्यकर विधियां अपनाए जाने के कारण औसत आयु में वृद्धि की यह प्रवृत्ति चलती रहेगी। इसका अर्थ है कि आबादी में बूढ़े व्यक्तियों की संख्या अधिक होगी। 1980 में, अमेरिका में कुल जनसंख्या का 11.2 प्रतिशत लोग 65 वर्ष से अधिक आयु के थे। समग्र संख्या के अनुसार ऐसे व्यक्तियों की संख्या ढाई करोड़ हुई। अनुमान है कि वर्ष 2000 में यह संख्या बढ़कर साढ़े तीन करोड़ और वर्ष 2030 में साढ़े छह करोड़ हो जाएगी।

भारत जैसे देश में, जहां की कुल जनसंख्या अमेरिका की जनसंख्या से लगभग 5 गुना है, 60 या 65 वर्ष से ऊपर की आयु के व्यक्तियों का कम प्रतिशत भी काफी अधिक संख्या का द्योतक है। आज भारत में लगभग 5 करोड़ व्यक्तियों की आयु 60 वर्ष से ऊपर है और यह कुल जनसंख्या का लगभग 6 प्रतिशत है। एक तुलनात्मक अध्ययन के अनुसार, केवल विकासशील देशों में वृद्ध लोगों की संख्या (60 वर्ष से अधिक आयु के) जल्दी ही विकसित देशों की कुल जनसंख्या के बराबर हो जाएगी।

विश्व की जनसंख्या की इस बदलती स्थिति के क्या परिणाम होंगे ? ये परिणाम सामाजिक-मनोवैज्ञानिक, आर्थिक और राजनीतिक भी हो सकते हैं। पुराने दिनों में, जब समाज या परिवार में बूढ़े व्यक्ति गिने-चुने ही होते थे, उन्हें आदर मिलता था और निर्णय लेने का अधिकार उनके हाथों में था। बुद्धिमानी सदैव आयु के साथ संबाधित होती थी--इसलिए बिना प्रश्न किए उनके निर्णयों को स्वीकार किया जाता था। एक प्रसिद्ध उक्ति के अनुसार 'कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति नौजवान होने की इच्छा कभी नहीं करता।' यौवन को सदैव शक्ति, ओज, जल्दबाजी और 'अभी या कभी नहीं' की प्रवृत्ति का प्रतीक समझा जाता है। दूसरी ओर, बूढ़े व्यक्ति अपने पिछले विस्तृत अनुभवों के आधार पर, तथ्यों को सही परिप्रेक्ष्य में तौलने का प्रयास करते हैं और अधिक वास्तविक और स्थायी निर्णय पर पहुंचते हैं।

जब किसी समाज में ऐसे 'बुद्धिमान' लोगों का अनुपात बढ़ेगा तो क्या होगा ? यह संभव है कि ऐसा एक देश या समाज ऐसे दक्ष और बुद्धिमान लोगों से बहुत लाभांवित हो, बशर्ते देश द्वारा उनका उपयोग किया जाए। यह भी संभव है कि सीमित अवसरों के कारण नौजवान पीढ़ी से प्रतिस्पर्धा की कौन कहे वृद्धों में आपस में ही प्रतिस्पर्धा हो जाए। 'यौवन' और 'बुढ़ापा' दोनों, एक दूसरे को पूरक की बजाय प्रतिस्पर्धियों के रूप में देखें।

आयु सृजनात्मकता में बाधक नहीं होती, और लोगों को कला और विज्ञान में अनेक प्रमुख उपलब्धियां बड़ी आयु में ही मिली हैं, लेकिन विदेशों में सर्वेक्षणों से पता चला है कि गणित, भौतिकशास्त्र और जीवविज्ञान में विलक्षण उपलब्धियां, साठ वर्षों की बजाय तीस वर्षों की आयु में हुईं। दूसरी ओर, राजनीति, प्रशासन और धर्म जैसे क्षेत्रों में, जिनमें अनुभव ही प्रमुख होता है, उपलब्धियां जीवन में बहुत बाद में मिलती हैं जैसा कि हमारे देश में स्पष्ट है।

बूढ़े व्यक्ति अपने व्यवहार में अधिक सावधान और दृढ़ होने का प्रयास करते हैं और सामाजिक संपर्कों से दूर हो जाते हैं। ऐसा व्यवहार वृद्ध होने की आंतरिक प्रक्रिया की बजाय सामाजिक सिद्धांतों और अनुभवों की भी देन हो सकता है। बहुत से व्यक्ति जो 'सफलतापूर्वक और शानदार ढंग से' बूढ़े होते हैं, वे लगातार जानकारी प्राप्त करने और नौजवानों के साथ सामाजिक संपर्कों को बढ़ाकर मानसिक जागरूकता बनाए रखने का प्रयास करते हैं। वृद्धावस्था में सही सामंजस्य के लिए
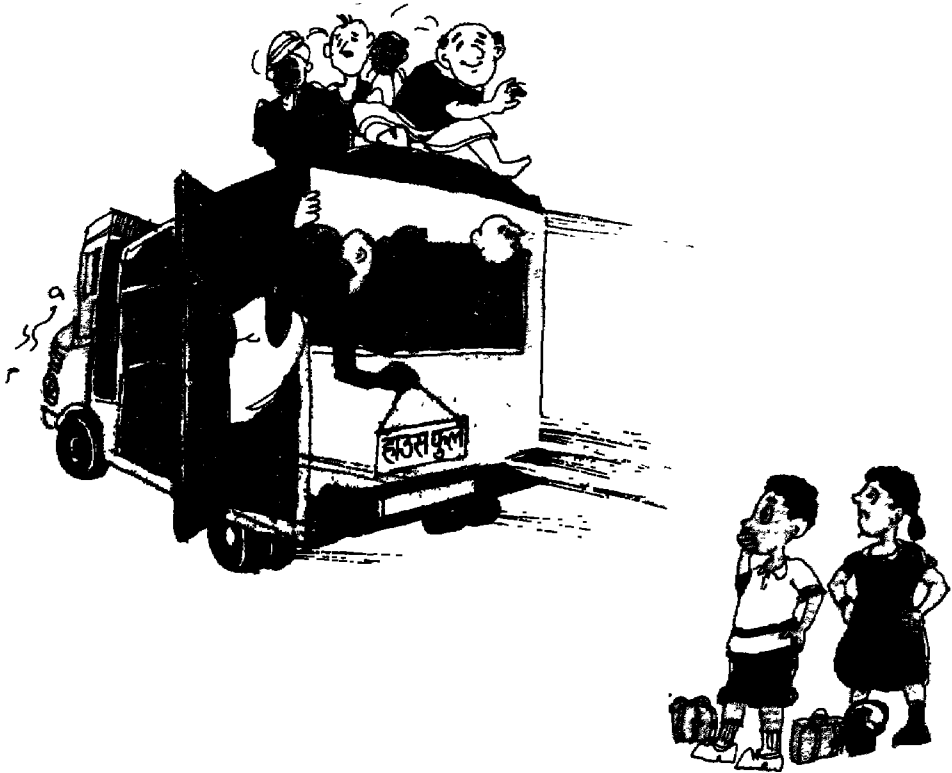
चित्र 16.

प्लेट 1 :
पार्किन्सन रोग का रोगी

प्लेट 2 :
कोकेन सिंड्रोम से पीडित
एक 15 वर्षीय बालक

प्लेट 3
स्मृतिभ्रंश का शिकार व्यक्ति

प्लेट 4
वर्नर्स सिंड्रोम से पीडित 42 वर्षीय महिला

प्लेट 5
पाच वर्ष की अवस्था मे समय से
पूर्व बूढ़ी हुई बालिका

गतिविधियों और रुचियों को विस्तृत रखना आवश्यक है। सही स्वास्थ्य और पर्याप्त आय जैसे दो कारक भी इसमें सहायक होते हैं।

औसत आयु में वृद्धि और एक स्वस्थ वृद्धावस्था सुनिश्चित करने के लिए चिकित्सा विज्ञान में हुई प्रगति (मृत्युपूर्व कष्टकारी दिन कम से कम हो जाने के साथ) से बहुत से देशों में भविष्य में ये संभावनाएं एक वास्तविकता बन जाएंगी। इसलिए, सरकारों को जवान और बूढ़े लोगों को सहक्रियाशील बलों के रूप में प्रयोग करने के लिए सोची समझी योजनाएं तैयार करनी चाहिए।

यह भी जरूरी है कि समाजों में एक नया सामाजिक और सांस्कृतिक ढांचा तैयार किया जाए। भाग्यवश, अच्छी सांस्कृतिक विरासत के कारण भारत में यह एक आसान काम है। बूढ़ों को यह जानना चाहिए कि नौजवान उनका अतीत हैं। नौजवानों को यह समझना चाहिए कि वृद्धावस्था उनका भविष्य है। अतीत का सम्मान होना चाहिए, और भविष्य की ओर देखना चाहिए। सर्वपल्ली राधाकृष्णन के शब्दों में : "न फूल पत्तियों को अस्वीकार कर सकते हैं, न पत्तियां डंठलों को, और न डंठल जड़ों को।"

7

निष्कर्ष

वृद्ध होने की प्रक्रिया आनुवंशिक रूप से नियोजित है। प्रत्येक जीव को, जिसे संतति को लैंगिक प्रजनन द्वारा संकर उजस्विता और जीवनशक्ति देने के लिए चुना गया है, उस प्रजनन कार्य को पूरा कर लेने के बाद, मृत्यु को प्राप्त होना है। यह सूचना स्वयं निषेचित अंड में डी एन ए, आर एन ए और प्रोटीन की भाषा में लिखी रहती है। यद्यपि, विकास के दौरान विभिन्न प्रजातियों ने अलग-अलग जीवनकाल पाया और यह अंतर मुख्य रूप से प्रजनन योग्य होने में लगने वाले समय की विभिन्न सीमाओं और स्वयं प्रजनन काल में अंतर के कारण हैं। इस प्रकार, मानव की तरह लंबे समय तक जीवित रहने वाली प्रजातियों को वयस्क होने में काफी समय लगता है। इसी तरह उनकी प्रजनन क्षमता का काल भी काफी लंबा है।

वृद्धावस्था की प्रक्रिया प्रजनन काल में किसी समय आरंभ होती है, यह दिखाने के लिए प्रायोगिक प्रमाण भी हैं। जैविक घड़ी बजती है और स्प्रिंग खुलने लगती है। समय के साथ सभी शारीरिक क्रियाओं में धीरे-धीरे अवनति आरंभ हो जाती है। ह्रास संबंधी ये परिवर्तन स्पष्ट होने के साथ-साथ सभी स्तरों पर होते हैं। पूर्ण ह्रास किसी विशेष बिंदु पर मृत्यु के रूप में घटित होते हैं। चूंकि इन परिवर्तनों को प्रभावित करने वाले मूल आदेश जीने में निहित हैं, अतः महत्वपूर्ण है कि आनुवंशिक तंत्र की सत्यनिष्ठा बनाए रखी जाए।

अलग-अलग लोगों की इस क्षमता में अंतर होता है—यह एक ऐसा लक्षण है जो वंशानुगत भी होता है। इस कारक के साथ-साथ बाहरी कारक, जैसे आहार और विकिरण, भी लोगों के जीवनकाल की विभिन्नता में योगदान देते हैं। इसके बावजूद, किसी भी जीव का जीवनकाल, कम से कम विकास के इस बिंदु पर निश्चित होता है।

जीवविज्ञान के क्षेत्र में तेजी से हो रहे ये अनुसंधान यह सुनिश्चित करते

हैं कि वृद्ध होने की प्रक्रिया में आनुवंशिक हस्तक्षेप संभव है। यह संभव है कि आने वाले वर्षों में दीर्घ आयु को और भी बढ़ाकर अधिकतम जीवन सीमा तक पहुंचाया जा सके। इसके अतिरिक्त अधिक महत्वपूर्ण यह है कि अपरिहार्य मृत्यु से पहले की पीड़ा को कम किया जाए, जिससे लोग सुख से जीवन बिताते हुए वृद्धावस्था की ओर अग्रसर हो सकें।

शब्दावली

अकाल	समय से पूर्व।
अगुणित	जनन कोशिका की तरह किसी प्रजाति के सभी विशिष्ट क्रोमोसोमों की एक प्रतिकृति वाले क्रोमोसोमों का सेट।
अतिसंवेदनशील	सुगमता से प्रभावित होने वाला; संक्रमण या रोग उत्पन्न करने वाले कीटाणुओं के आक्रमण के प्रति सुग्राही।
अर्धसूत्री विभाजन	प्रजनन कोशिका के विकास के समय होने वाला विभाजन, जिसमें क्रोमोसोम की संख्या आधी रह जाती है।
अनश्वर	मृत्यु से परे; जिसका नाश न हो।
अनिद्रा	नींद न आना; लंबे समय तक न सो पाने का रोग।
अनुकूलन	परिस्थितियों के अनुसार सामंजस्य स्थापित करने की क्रिया-प्रक्रिया।
अपक्रिया	ठीक से काम न करना।
अपक्षय	व्यर्थ होना; व्यवहार में न आने के कारण आकार एवं क्रियात्मक गतिविधियों का घटते जाना; दुर्बलता।
अपारगम्य	रास्ता न देने वाला, विशेष रूप से तरल पदार्थों को; अभेद्य।
अमीनो अम्ल	प्रोटीन की मूल इकाई

अल्ज़ेमीर रोग	आयु से संबंधित एक बीमारी, जराजन्य क्षय जिसका लक्षण है।
अलैंगिक	लैंगिक क्रिया का अभाव।
अविलेय	जिसे घोला न जा सके।
अस्थि विरचन	अस्थि ऊतक का ह्रास; भंगुर और टूटने के लिए प्रदत्त अस्थियां।
आकारिकी	पशुओं और पौधों का बाह्य आकार।
आघात	एपोपलेक्सी या पक्षाघात का आक्रमण।
आनुवंशिक अभियांत्रिकी	एक जैविक विज्ञान, जिसका उद्देश्य है कुछ विशेष जीनों को रूपांतरित करके या निकाल कर आनुवंशिक दोषों को नियंत्रित करना और जीन प्रत्यारोपण द्वारा कुछ लाभदायक जैविक पदार्थो का बड़ी मात्रा में उत्पादन।
आनुवंशिकी	वंशागत से संबंधित विज्ञान; अभिभावकों से संतति में लक्षणों के हस्तांतरित होने का मार्ग।
आप्टिक	देखने या आंख से संबंधित।
अंगघात	शरीर के किसी भाग या हर भाग में गतिहीनता या अनुभूति की कमी।
अंडाणु	मादा लिंग कोशिका जो नर शुक्राणु द्वारा निषेचित होने पर एक नए जीव में विकसित होने में सक्षम होती है।
अंतरकोशिकीय	कोशिकाओं के बीच का स्थान।
अंतःस्रावी	भीतरी रूप से निस्रवित होने वाली; विशेष रूप से कुछ ग्रंथियों के लिए प्रयुक्त जो स्राव को रक्त में छोड़ती है; नलिकाविहीन ग्रंथियां।
इलैस्टिन	प्रत्यास्थ ऊतक का मुख्य घटक, एक प्रोटीन।
उत्परिवर्तन	लक्षणों या क्रियाओं में होने वाला अचानक परिवर्तन।

उत्प्रेरक	रासायनिक प्रक्रिया को तेज करने वाला पदार्थ, लेकिन जो स्वयं नहीं बदलता।
उद्दीपन	एक क्रिया, प्रभाव या माध्यम जो सजीवों में एक प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है।
चयापचय	जीवित पदार्थों में होने वाला रासायनिक परिवर्तन।
एक्स-रे	प्रकाश के प्रति अपारदर्शी पदार्थ में प्रवेश कर सकने वाले अत्यंत लघु तरंग-दैर्ध्य के विद्युत चुंबकीय विकिरण।
एककोशिकीय	एक कोशिका से बना जीव या ऊतक जैसे कि जीवाणु या कुछ कवक।
एकयुग्मनज	एक युग्मनज से विकसित।
एंजाइम	जीवित कोशिकाओं द्वारा उत्पादित प्रोटीन पदार्थों के बहुत बड़े वर्ग में से एक, जो उत्प्रेरक की तरह काम करते हैं।
एन्ड्रोजेन	नर लिंग हार्मोन।
एस्ट्रोजेन	मादा लिंग हार्मोन।
कार्टीलेज	जीवों के शरीर में जोड़ों को ढकने वाला मजबूत और लचीला पदार्थ।
कायिक	शरीर के प्रजनित न होने वाले भागों से संबंधित; शारीरिक क्रिया से संबंधित।
काल क्रमिक	समय के अनुसार।
कालपूर्व जरा	एक अत्यंत दुर्लभ स्थिति जिसमें वृद्धावस्था के सभी लक्षण बचपन में ही उभर आते हैं और बढ़ने लगते हैं, जिससे किशोरावस्था में ही जरावस्था आ जाती है।
कोकेन सिंड्रोम	एक आनुवंशिक रोग जिसमें पराबैंगनी प्रकाश के प्रति संवेदनशीलता, मानसिक मंदता, समय से पूर्व वृद्धावस्था और बोनापन होता है।

कोडोन	प्रोटीन विश्लेषण में प्रोटीन विशेष का निर्धारण करने वाला, संदेशवाहक आर एन ए में तीन क्षारों का सैट।
कोलेजन	तंतुमय संयोजी ऊतकों में पाई जाने वाली प्रोटीन।
क्रोमोसोम	कोशिका केंद्रक के क्रोमेटिन का छड़ जैसा भाग।
क्रासिंग ओवर	अलग होने से पहले दो क्रोमोसोमों के भागों की अदला-बदली।
गामा किरण	रेडियम तथा अन्य रेडियोधर्मी पदार्थों से निकलने वाला अंतर्वेधी विकिरण।
गुरुत्व	भारहीनता; गुरुत्वाकर्षण या त्वरण।
घ्राण	सूंघने से संबंधित।
जननक्षमता	प्रजनन, हैचिंग और अंकुरण के लिए सक्षम।
जर्जरता	बुढ़ापे के लक्षण।
जराविज्ञान	बूढ़ा होने की प्रक्रियाओं का वैज्ञानिक अध्ययन।
जरा स्मृतिभृंश	वृद्धावस्था में होने वाली बौद्धिक क्षमताओं में कमी।
जीन	क्रोमासोमों पर व्यवस्थित डी एन ए की इकाई जो अभिवाहक के विशिष्ट गुणों को संतान तक पहुंचाती है।
जीनोम	किसी व्यक्ति के क्रोमासोमों का संपूर्ण सैट; एक ऐसे सैट में जीनों की कुल संख्या।
जीरोडर्मा पिगमैन्टोसम	एक आनुवंशिक रोग जिससे डी एन ए प्रतिपूर्ति क्रिया क्षीण हो जाती है। परिणामस्वरूप त्वचा पराबैंगनी विकिरणों के प्रति संवेदनशील हो जाती है और सूर्य के प्रकाश से त्वचा के कैंसर के प्रति तत्पर हो जाती है।

जीवाणु	एककोशिकीय जीवों का वर्ग, अनेक रोगों का कारण।
जीर्ण	लंबे समय तक चलने वाला; गहराई में जमा हुआ।
जीर्णता	वृद्धावस्था के कारण शारीरिक या मानसिक दुर्बलता।
तरलता	अकठोर अवस्था, तुरंत परिवर्तनीय।
थायमस ग्रंथि	गर्दन की जड़ में और द्विखंडीय नलिकाविहीन ग्रंथि। बचपन में थायमस सूक्ष्मजीवों और बाह्य प्रोटीनों के प्रति प्रतिरक्षाक्रिया के विकास को नियंत्रित करती है।
द्वियुग्मनज	दो निषेचित अंडों या युग्मनजों से विकसित।
दुर्दम	मृत्यु की ओर ले जाने वाला, या बद से बदतर होना, विशेष रूप से कैंसरी।
दुष्क्रिया	किसी अंग का ठीक से काम न करना।
दौरा	आघात या एपोपलेक्सी का अचानक आक्रमण।
धमनी	हृदय से रक्त ले जाने वाली नली या वाहिनी।
धमनी काठिन्य	धमनियों का कड़ा हो जाना।
धड़कन	किसी तंत्रिका या पेशी से होकर जाने वाली तरंग या स्पंद।
न्यूक्लिओटाइड	फास्फेट से जुड़ी शर्करा सहित एक नाइट्रोजनी क्षार; नाभिकीय अम्लों की क्षारीय इकाई।
न्यूक्लिक (नाभिकीय) अम्ल	कोशिका के जटिल अम्ल संघटक।
न्यूरॉन	तंत्रिका कोशिका।
निग्रह	रखा जाना; या नीचे रखना; या अल्प।
निम्न गैंग्लिऑन	खोपड़ी के आधार या निम्नतम स्तर पर स्थित मस्तिष्क का तंत्रिका केन्द्र।

निश्वसन	फेफड़ों में सांस खींचने की क्रिया।
टेम्पलेट	पैटर्न या पथप्रदर्शक के रूप में प्रयोग किया जाने वाला मानदंड।
टेंडन	पेशियों को अस्थियों से जोड़ने वाला कड़ा, घना कॉर्ड।
डाउन्स सिंड्रोम	मंगोलता : मानसिक विकृति सहित मुखाकृतिक लक्षण।
डिप्लायड (द्विगुणित)	सामान्य द्विगुणित संपूरक आनुवंशिक पदार्थधारी कोशिका डीआक्सीराइबोन्यूक्लिक अम्ल; सभी पादप एवं जीव कोशिकाओं का क्रोमोसोमों में पाया जाने वाला डीआक्सीराइबोज (शर्करा) युक्त न्यूक्लिक अम्ल, जो आनुवंशिक लक्षणों को पास करने के लिए सूचनाओं को कोडित रूप में ले जाता है; संकेताक्षर डी एन ए।
प्यूरीन	द्वि-चक्रीय आण्विक रचना वाला नाइट्रोजन यौगिक जो न्यूक्लिक अम्लों से न्यूक्लिओटाइड बनाता है।
प्लाज्मिड	स्वयं अपनी प्रतिलिपियां तैयार करने वाला अतिरिक्त गोलाकार डी एन ए।
परभक्षी	शिकार पर जीने वाला।
पराबैंगनी प्रकाश	संक्षिप UV; दृश्य स्पैक्ट्रम के बैंगनी सिरे से दूर, अदृश्य छोटी तरंग दैर्ध्य का विकिरण।
परिपक्वता	पूर्ण विकास तक पहुंचना; पूरी तरह पकने की प्रक्रिया।
पक्ष्माभिकी पेशियां	जिनका संकुचन लेंस की वक्रता को बदल देता है और प्रकाश के समायोजन में सहायता करता है।
पार्किन्सन रोग	अधेड़ावस्था या वृद्धावस्था में होने वाला रोग, कंपकंपी, कठोरता और गतिहीनता की कमी जिसके लक्षण हैं।

पिरीमिडीन	नाइट्रोजन युक्त चक्रीय आण्विक रचना जो न्यूक्लिक अम्लों के न्यूक्लिओटाइड बनाती है।
पीढ़ी	प्राकृतिक वंशक्रम में एक अवस्था; एक ही युग या काल के व्यक्ति; एक ही पूर्वज से समान दूरी के वंशज; संतति; जाति।
पुनर्युवनित	फिर से तरुण बनाना या होना या देखने में फिर से सक्रिय होना।
पुनर्संयोजन	फिर से परस्पर जुडना; विभिन्न डी एन ए अणुओं के मिलने से उत्पन्न पुनर्संयोजित आनुवंशिक पदार्थ।
पूर्वजैविक	जीवन आरम्भ होने से पहले का युग।
पेप्टाइड	दो या उससे अधिक अमीनो अम्लों से बना अणु जिसके अमीनो (-NH2) वर्ग के बीच बंध मौजूद होते हैं। यह बंध पेप्टाइड बंध कहलाता है।
प्रजनित	संतति के रूप में जन्म देना; प्राकृतिक रूप से संख्या में वृद्धि।
प्रतिकृति	द्विगुणन या संख्या बढ़ाने के लिए स्वयं अपनी नकल।
प्रवर्धन	जनक से प्राकृतिक प्रक्रियाओं द्वारा संख्या में वृद्धि; प्रजनन।
प्रसुप्त	विकास या सक्रियता के लिए प्रतीक्षित निष्क्रिय अवस्था।
प्रोटोजोआ	सबसे निम्न और सरलतम जीव; एककोशिकीय प्ररुप या जो विखंडन द्वारा बहुगुणित होती हैं।
प्रोटीन	जटिल नाइट्रोजनी पदार्थो के वर्ग की एक सदस्य जो पेड़ों और जीवों के शरीर में मुख्य भूमिका निभाती है।

प्रोटोप्लाज्म	रंगहीन, जेली जैसा पदार्थ जो पौधों और जीवों में जीवन का मूल पदार्थ होता है (जीवद्रव्य)
फाइब्रोब्लास्ट	संयोजी ऊतकों में एक कोशिका जिससे तंतुमय ऊतक बनते हैं।
बहुकोशिकीय	अनेक कोशिकाओं से निर्मित।
बहुलकीकरण	मिलकर एक जटिल अणु बनाने की प्रक्रिया।
बीजाणु	पौधों या सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न अल्प प्रजनन पिंड।
भ्रूणीय	किसी जीव की संतति के जन्म से पहले विकास की आरंभिक अवस्था।
मधुमेह	एक रोग जिसमें शर्करा का सही ढंग से उपयोग नहीं होता
मायोपिया	दृष्टि दोष; निकट दृष्टि।
मोतियाबिंद	बिना दर्द या प्रदाह के आंख के लेंस की अपारदर्शी स्थिति।
मंगोलायड	मंगोलता के लक्षण प्रदर्शित करने वाला; क्रोमोसोमों की असामान्यता के कारण होने वाला आनुवंशिक रोग जिसमें मानसिक अपूर्णता के साथ साथ नाक-नक्श चपटे और फल से हो जाते हैं; आजकल इसे डाउन्स सिंड्रोम कहते हैं।
मृत्यु दर	प्रति सौ या हजार लोगों के पीछे मरने वालों की संख्या।
युग्मक	लैंगिक प्रजनन कोशिका; अंडाणु या शुक्राणु।
युग्मनज (जाइगोट)	लैंगिक प्रजनन के समय निषेचन के फलस्वरूप बना उत्पाद।
योगवाही	संयोजित या समन्वयी क्रिया; एक साथ काम करना; एक पदार्थ जो दूसरे के प्रभाव को बढ़ा देता है।

रक्त-अल्पता	खून की कमी; लाल रुधिर कणिकाओं या हीमाग्लोविन की कमी—एक अवस्था। पीलेपन और सुस्ती से जिसका पता लगता है।
रजोनिवृत्ति	मासिक धर्म का बंद हो जाना; जीवन का परिवर्तन।
राइबोज	आर एन ए और डी एन ए में मिलने वाली पेन्टोज (5 कार्बन) शर्करा।
राइबोन्यूक्लिक अम्ल	कोशिकाओं के केंद्रक और कोशिका द्रव में पाया जाने वाला राइबोज शर्करायुक्त न्यूक्लिक अम्ल।
रूपांतरण	आकार, रूप, गुण और प्रकृति में परिवर्तन।
रोग लक्षण	शरीर की दशा में परिवर्तन का संकेत।
रोधक्षम	जो प्रतिरक्षी विधि में सहायता करे; जो व्यक्ति संक्रमण या रोग उत्पन्न करने वाले जीवाणुओं के लिए प्रवृत्त न हो।
लिप्यंतरण	डी एन ए टेम्पलेट के प्रयोग द्वारा आर एन ए का विश्लेषण।
वर्नर्स सिंड्रोम	एक आनुवंशिक रोग जिसके नैदानिक लक्षण समय पूर्व या त्वरित जरा से मिलते हैं, जिसमें लिम्फायड अवक्षय, ग्लूकोज असहनशीलता, मोतियाबिंद, बालों का सफेद होना और धमनी काठिन्य की घटनाओं और कैंसर में वृद्धि आदि लक्षण होते हैं।
वसा ऊतक (एडिपोज टिशू)	वसा निहित आशयुक्त या थैली जैसी रचनाएं।
वातस्फीति	हवा के कारण शरीर के किसी भाग का अप्राकृतिक प्रसार; श्वसन में कठिनाई के साथ फेफड़ों का प्रसार
विकिरण	किरणों का उत्सर्जन और विसरण; वैद्युत चुम्बकीय तरंगों में प्रसारित ऊर्जा।

विलोपक	जो विलुप्त करता हो।
वैस्कुलर	नलिकाएं या वाहिनियां जिनसे होकर रक्त या सैप बहता है।
वंशानुगत	पूर्वजों से प्राप्त।
श्वसन	सांस लेना; शारीरिक क्रियाओं सहित आक्सीजन अंदर लेना और कार्बन डाइआक्साइड बाहर निकालना।
श्वसनी	वायुनली की मुख्य शाखा।
श्वसनी शोथ	श्वसनी वायुमार्ग नलिकाओं का प्रदाह।
स्तंभक कोशिकाएं	मुख्य या उद्भव कोशिकाएं जो किसी कुल या वंशावली की बहुत सी कोशिकाओं को जन्म देती हैं।
स्थानांतरण	mRNA में कोडित संदेश की सहायता से कोशिकाओं में प्रोटीन विश्लेषण।
स्पंदन	क्रियाशील; एक अनैच्छिक प्रक्षोभ; एक तरंग।
स्मृतिभ्रंश	मानसिक शक्ति के ह्रास या बेकार हो जाने से लक्षित होने वाली विक्षिप्तता का एक रूप; बुद्धि, स्मृति और अनुकूलन का जैविक ह्रास।
स्वास्थ्य विज्ञान	स्वास्थ्य को सुरक्षित रखने की कला या विज्ञान; स्वास्थ्यप्रद सिद्धांत।
सजीव	जिसमें जीवन हो।
सर्पिलज	स्क्रू के आकार की कुंडली।
समजात	एक समान प्रकृति के; आपेक्षिक स्थिति में एक समान; सामान्य रचना और वंशज।
सूत्री विभाजन	कोशिका विभाजन की विस्तृत प्रक्रिया जिसमें प्रोटोप्लाज्मिक तंतु एक निश्चित आकार में व्यवस्थित हो जाते हैं।
स्राव	किसी गुहा में आंतरिक वृद्धि द्वारा बनने वाला खनिज पदार्थ का ढेर; जो स्रावित हो।

संकर — विभिन्न प्रजातियों या किस्मों के अभिभावकों से उत्पन्न।

संकुचन — पेशियों या पेशी तंतुओं का कस जाना।

संघटन — किसी वस्तु के अवयवों का अनुपात या प्रकृति।

संदेशवाहक आर एन ए — कोशिका के केंद्रक से राइबोसोम (प्रोटीन बनाने वाली रचनाएं) तक आनुवंशिक ब्लूप्रिंट (डी एन ए) की सूचना ले जाने वाला आर एन ए।

संधिशोथ — जोड़ों का प्रदाह; गठिया।

संपूरक — पूरा करने वाला।

संप्रवाह — एक साथ बहना; एक साथ मिलने या मिश्रित होने की क्रिया।

संयुग्मन — दो कोशिकाओं या एकलों का स्थायी या अस्थायी युग्मन।

संयोजी ऊतक — साथ जोड़ने वाले ऊतक; विभिन्न भागों के बीच संबंध स्थापित करने वाले ऊतक।

संलक्षण (सिंड्रोम) — ले जाने या संचरित करने की क्रिया।

हार्मोन — एक भीतरी स्राव जिसके जीव के किसी भाग में पहुंचते ही एक विशेष कायिक क्रिया आरम्भ हो जाती है।

हेफ्लिक सीमा — प्रयोगशाला में कोशिका समिष्ट में होने वाला अधिकतम द्विगुणन।

जुपिटर ऑफसेट वर्क्स, दिल्ली-110032 द्वारा मुद्रित